that if it has any merits, they may be equally shared by the large number of Hindi and Urdu speaking students, in Central and Northern India.

While I believe I have spared no pains in making this text-book, as up-to-date and comprehensive in its character, as its size and price would permit, I must put down a word of warning to all students and teachers, as a piece of my personal experience not to depend entirely upon any text-book as such, if they wish to obtain a real insight into the subject. No single text-book can meet all the needs of school going students. In History, *as in other subjects of educative value, it is the* effort of the student that counts, and not the actual output of information, compressed in a single volume, of limited scope. A text book has, therefore, merely to be used as a useful guide, suggestive of the various channels of thought, and research, into which the students' efforts could be profitably directed and in this sense I trust, my labours in the present production may prove of some help and guidance in this vital subject, which at any rate possesses a [illegible] importance.

Time and space which are the soul of history, will be found sufficiently marked throughout the

सर देसाई रचित

शालोपयोगी भारतवर्ष

अर्थात्

भारत का संक्षिप्त इतिहास

अनुक्रमणिका

प्रथम भाग—प्राचीन भारत

पहला अध्याय

प्राचीन काल

सर देसाई रचित

शालोपयोगी भारतवर्ष

अर्थात्

भारत का संक्षिप्त इतिहास

अनुक्रमणिका

प्रथम भाग—प्राचीन भारत

पहला अध्याय

[illegible]

दूसरा अध्याय

मुग़ल वंश

तृतीय अध्याय

पराक्रमी अकबर

चतुर्थ अध्याय

जहाँगीर और शाहजहाँ

दूसरा अध्याय

बौद्ध काल—ई० स० पू० ६००-३२३

तीसरा अध्याय

हिन्दू-साम्राज्य—काल ई० स० पू० ३२२—ई० स० ५१०

चतुर्थ अध्याय

मांडलिक राज्यों का प्रसार—ई० स० ६००-११९३

दूसरा भाग—मुस्लिम शासन-काल

पहला अध्याय

पठानों का शासन—सन ११९२ १५२६

दूसरा अध्याय

मुग़ल वंश

तृतीय अध्याय

पराक्रमी अकबर

चतुर्थ अध्याय

जहाँगीर और शाहजहाँ

पाँचवाँ अध्याय
औरंगज़ेब

छठाँ अध्याय
मुग़ल वंश का ह्रास काल

सातवाँ अध्याय
मुग़ल शाही का अंत

तीसरा भाग—महाराष्ट्र-शासन-काल

पहला अध्याय

स्वराज्य-स्थापन की शक्ति

दूसरा अध्याय

शिवाजी का पूर्व-चरित्र

तीसरा अध्याय

राज्य स्थापन

ग्यारहवाँ अध्याय

नारायणराव और सवाई माधवराव

बारहवाँ अध्याय

छत्रपति द्वितीय शाहू, पेशवा द्वितीय बाजीराव

तेरहवाँ अध्याय

महाराष्ट्र शक्ति का अंत
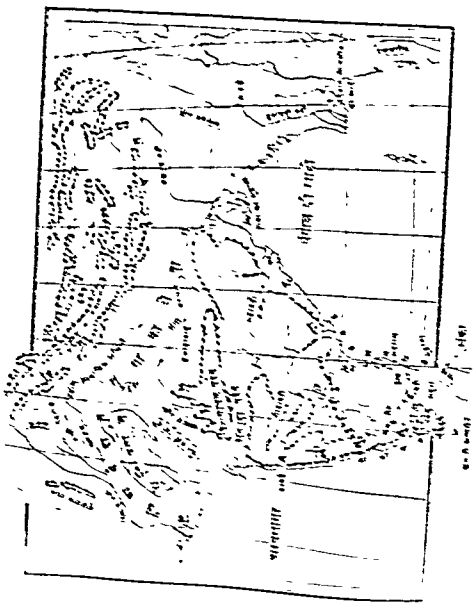
३—भारत के समुद्री किनारों पर अनेक बन्दरगाह हैं। ये भारत के प्रवेश द्वार हैं। ऐसे बन्दरगाह पश्चिम-तट पर अनेक हैं, लेकिन पूर्वी तट पर केवल इने-गिने ही हैं और ये भी पश्चिमी बन्दरगाहों के समान अच्छे नहीं हैं।

४—व्यापार की सुविधा के लिए पूर्व काल में बड़े बड़े नगर केवल बड़ी बड़ी नदियों के किनारे बसाये जाते थे। लेकिन योरपीयों के भारत में आने से बड़े बड़े जहाज़ों के घुमाने के लिए कलकत्ता, मद्रास, बम्बई, करांची इत्यादि नगर व्यापार की बड़ी से बड़ी मंडी बन रहे हैं। इसीलिए ये बड़ी बड़ी रेलवे लाइनों के केन्द्र बनाये गये हैं।

५—खंभात की खाड़ी से लेकर महानदी के मुहाने तक जो जंगल पश्चिम से पूर्व तक फैला हुआ है उसके बीच में विन्ध्याचल पहाड़ की श्रेणी है। इस श्रेणी ने भारत को उत्तर और दक्षिण—इन दो भागों में बाँट दिया है। भारत के ये दो विभाग बहुत प्राचीन काल से माने जाते हैं। प्राचीन काल में यह जंगल इतना सघन था कि इसको पार करना बड़ा कठिन काम था।

६—उत्तर-भारत एक लम्बा-चौड़ा मैदान है। इस भाग में सिन्धु और गंगा दो बड़ी नदियाँ तथा इनकी अनेक सहायक नदियाँ बहती हैं, जिससे यह देश बड़ा उपजाऊ बन गया है। इसी देश को पहले 'आर्यावर्त' कहते थे, यहीं 'आर्य-सभ्यता' की उन्नति हुई थी। इसलिए इन नदियों की रचना और देश पर पड़नेवाले प्रभाव की बात जाननी और समझनी ज़रूरी है।

७—भारत के उत्तर में हिमालय-पर्वत माला है और दक्षिण में

अगाध भारत-महासागर है। इसलिए उत्तर-भारत में निश्चित रूप में वृष्टि होती है। उपजाऊ भूमि और सिंचाई के लिए जल सुलभ होने से इस देश का मुख्य धंधा खेती है। अन्य धंधे इसी के सहारे पनपते हैं।

८—अनुकूल जलवायु, उपजाऊ भूमि और उद्योगशील तथा बुद्धिमान लोगों के बसने से यह देश पूर्व-काल में ही अपार सम्पत्ति का घर बन चुका था। यहाँ अनेक विद्याओं तथा कलाओं की उन्नति हुई। इसीलिए यह सारे संसार में इतना प्रसिद्ध हो गया कि विदेशों की दृष्टि इसी पर गड़ गई।

९—भिन्न भिन्न प्रकार के जल-वायु, फल-फूल, वनस्पतियाँ, पशु एवं अन्य प्राणी, खनिज-सम्पत्ति इत्यादि सभी इस देश में प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। इसलिए पश्चिमी तट के बंदरगाहों पर विदेशों के जहाज़ इन चीज़ों को लेने के लिए आते थे। इससे यहाँ का व्यापार बहुत बढ़ा-चढ़ा था। इस व्यापारिक उन्नति के कारण ही इसे लोग 'सुवर्ण-भूमि' कहते थे। श्रीकृष्ण की सोने की द्वारका-नगरी और सुदामा को दी गई सोने की सुदामापुरी (पोर बंदर) की कथायें उस समय का वैभव आज भी हमें बताती हैं।

२—स्थल-निर्देश

आज-कल रेल-पथों के खुल जाने से यात्रा के प्राचीन कालीन मार्ग और लड़ाई तथा प्रबंध के स्थानों का महत्व कुछ भी नहीं रह गया। इसलिए पहले की घटनाओं को यथावत् समझने के लिए उस समय की स्थिति को ध्यान में रखना ज़रूरी है। हिमालय पर्वत-श्रेणी के दक्षिण का मैदान गंगा की धार [illegible] में हो

होगया है। पंजाब में भूमि दक्षिण ओर करांची तक ढालू होती चली गई है। इसीलिए पंजाब की सभी नदियाँ दक्षिण की ओर मुँह करके बहती हैं। लेकिन सतलज और यमुना के बीच का मैदान थोड़ा ऊँचा होगया है। इसलिए दिल्ली से पूर्व यमुना और गंगा पूर्व की ओर बहती हैं। और दक्षिण की ओर से मालवे के पठार से निकल कर चम्बल, बेतवा, केन यमुना में और कर्मनाशा और सोन गंगा में आकर मिलती हैं। अर्थात् मालवा का भूभाग ऊँचा होगया है और वह उत्तर की ओर ढालू है। सारांश यह कि गंगा-यमुना का प्रवाह-मार्ग बहुत नीचा है। इसलिए पूर्व-काल में यह मार्ग यात्रा के लिए अधिक सुभीते का था। पहले इसी मार्ग पर बड़े बड़े किले और मोर्चे बने थे। यहाँ के कन्नौज, आगरा, कालिंजर, इलाहाबाद, जौनपुर, चुनारगढ़, रोहतासगढ़, बक्सर, मुंगेर इत्यादि अनेक स्थानों का उल्लेख मुसलमानी शासन-काल के तथा उसके बाद के इतिहास में बारबार हुआ है। भागलपुर के आगे गंगा-नदी राजमहल की पहाड़ियों से टकरा कर मणिहारी के पास मुड़ कर दक्षिण-वाहिनी हो जाती है। उस स्थान से उसका बंगाल का मार्ग शुरू होता है। इसी से पूर्व-काल में जो सेनाएँ लड़ने के लिए यहाँ आती थीं उन्हें इसी राह से होकर आना पड़ता था।

५—विद्यार्थियों के लिए काल-परिज्ञान

चाहे किसी भी देश का इतिहास हो, उसका कुछ न कुछ सम्बन्ध समस्त संसार के इतिहास से अवश्य रहता है। इसलिए प्राचीन काल की घटनाएँ किस प्रकार घटित हुई और बाद को उनका किस तरह विभाग हुआ, यह समझने और उनका स्मरण रखने के लिए मुख्य मुख्य घटनाओं की समय-सूचक सूची की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए नीचे दी हुई समय-सूचक सूची के भारत के इतिहास के साथ साथ ध्यान में रक्खे जाने से संसार में होनेवाले भिन्न भिन्न स्थानों के समकालीन प्रसिद्ध व्यक्ति तथा घटनाएँ विद्यार्थी की समझ में आ जायँगी। इस पाठ के प्रारंभ का कुछ अंश एच० जी० वेल्स की पुस्तक से लिया गया है। इसके अलावा बहुत सी बातों का काल-निर्णय अभी नहीं हुआ है।

ईसवी सन् के प्रारम्भ होने से पूर्व की घटनाएँ

३० हज़ार—वर्तमान संसार का पहला पूर्ण मनुष्य फ्रांस-स्पेन की भूमि में तैयार हुआ। इसके बाद का युग प्राचीन पाषाण-युग कहलाता है। सभी मानव-जातियों की उत्पत्ति एक ही स्थान में नहीं हुई। जल-वायु के योग से और अन्य पोषक सुविधाओं के योग से पृथिवी के अनेक भागों में भी मानव जाति की उत्पत्ति हुई।

१० हज़ार—नवीन पाषाण-युग—खेती करने तथा जानवरों के पालने का प्रारम्भ, ओतना, पेरना, काटना, दलना, टोकरी इत्यादि बिनना, काठ के हल व चरखे, मट्टी हुई

छोटी नावें काम में लाना, देवता व संतोष के लिए मनुष्य की बलि देना इत्यादि बातों का प्रारम्भ।

७ से ६ हज़ार—पश्चिमी एशिया और मिस्र में दीवारों से घिरे हुए नगरों का बसाना, विटोरन, मेसोपोटामिया या ईराक़ में उनके कपड़े बिनने का प्रारम्भ, मछली पकड़ने के लिए नावों का बनना।

५ से ४ हज़ार—इज़ला (Tigris) और फ़ुरात (Euphrates) नामक नदियों के बीच के प्रदेश सुमेरिया तथा नील नदी के तट पर मिस्र-देश में ज्यामिति-विद्या की उत्पत्ति, अन्य विषयों में सुधार, आर्यों के वेद, गीता इत्यादि ग्रन्थों का समय। ४२४१ मिस्र की वर्ष-गणना का आरम्भ।

४ से ३ हज़ार—मिस्र-देश में पिरामिड का निर्माण। अयोध्यापति श्रीरामचन्द्र का समय। सुमेरिया में नहरों का बनना (सिन्धप्रान्त में मोहेंजोदारो और मुलतान के पास हराप्पा नाम के दो प्राचीन नगरों का पुरातत्त्वविदों-द्वारा हाल में पता लगा है, उनके खंडहरों से उनकी मूल-रचना ईसाई सन से पूर्व तीन हज़ार वर्ष प्राचीन सुमेरियन के समकालीन अनुमान की गई है। इस सम्बन्ध में अभी मत बदलना सम्भव है) रेशमी वस्त्र का उपयोग चीन में होने लगा।

३१०१—युधिष्ठिर के संवत्सर का प्रारम्भ।

२७५०—सुमेरिया का पहला राजा सार्गन।

२५००—असीरियाई साम्राज्य की स्थापना। आर्यों की पूर्व बस्ती कैस्पियन समुद्र के पास से पश्चिम की ओर योरप में डान नदी के तट तक थी। वहाँ से उनका आग्नेय

कोने से उत्तर-अफ़ग़ानिस्तान के मार्ग-द्वारा भारत में प्रवेश। दक्षिण में ईरान और पश्चिम में बाल्कन-प्रायद्वीप से होकर इटली में आर्यों की तीन शाखाओं का प्रयाण। भारतीय युद्ध ३०००—२५०० के बीच में। वराहमिहिर इस युद्ध का समय २४४८ वाँ वर्ष बताता है।

२०००—१५००—आर्यों की उन्नति। गेहूँ, लोहा, और घोड़ों का व्यवहार।

१६००—मिस्र में फ़रोह राजा का ऐश्वर्य उसका असीरिया वालों के साथ युद्ध।

१५००—१०००—असीरिया और बेबीलोनिया में सुधार की बाढ़, यहूदी धर्म संस्थापक मोज़ेज़ (मूसा) का समय, कपड़ा, लोहा तथा काँच का उपयोग होना और लोगों का रहन-सहन लगभग आज-कल जैसा समृद्धिपूर्ण होना। भारत में आर्यों के ऋग्वेद की ऋचाओं का संग्रह होना और उनका जीवन सुसम्पन्न बनना, उपनिषदों की रचना। पैलेस्टाइन-देश में यहूदी लोगों के पूर्वज अब्राहम के वंश का उदय।

१०००—९६०—हिब्रू राजे डेविड और सालोमन का जेरूसलम में शासन।

१०००—८००—ग्रीक जाति का उत्तर में विस्तार, भारत में आर्यों का आग्नेय में विस्तार, मिस्र का उत्थान और वहाँ की लिपि का विकास।

८००—फिनीशों के सामने उत्तर-अफ्रीका के तट पर कार्थेज नगर की उन्नति। इसकी जन-संख्या १० लाख थी। पारसी या ज़रथोस्ती धर्म के संस्थापक ज़रोआस्टर का समय।

कोने से उत्तर-अफ़ग़ानिस्तान के मार्ग द्वारा भारत में प्रवेश। दक्षिण में ईरान और पश्चिम में बाल्कन प्रायद्वीप से होकर इटली में आर्यों की तीन शाखाओं का प्रयाण। भारतीय युद्ध ३०००—२५०० के बीच में। वराहमिहिर इस युद्ध का समय २४४८ वाँ वर्ष बताता है।

२०००—१५००—आर्यों की उन्नति। गेहूँ, लोहा, और घोड़ों का व्यवहार।

१६००—मिस्र में फ़रोह राजा का ऐश्वर्य उसका असीरिया वालों के साथ युद्ध।

१५००—१०००—असीरिया और बेबीलोनिया में सुधार की बातें, यहूदी धर्म संस्थापक मोज़ेज़ (मूसा) का समय, कागज़, लोहा तथा काँच का उपयोग होना और लोगों का रहन-सहन लगभग आजकल जैसा समृद्धिपूर्ण होना। भारत में आर्यों के ऋग्वेद की ऋचाओं का संग्रह होना और उनका अंतिम सुसम्बद्ध बनना, उपनिषदों की रचना। पैलेस्टाइन-देश में यहूदी लोगों के पूर्वज अब्राहम के वंश का उदय।

१०००—९५०—हिब्रू राजे डेविड और सालोमन का जेरुसलम में शासन।

१०००—८००—ग्रीक जाति का उत्तर से विस्तार, भारत में आर्यों का आर्यावर्त में विस्तार, मिस्र का उद्धार और वहाँ की लिपि का विकास।

८००—फिनिशी के बसाये उत्तर-अफ्रीका के तट पर कार्थेज नगर की उन्नति। इसकी जन-संख्या १० लाख थी। पारसी जरथोस्त्री धर्म के संस्थापक जरथुस्त्र का समय।

१२१५—किंग जान-द्वारा लोगों को मेग्नाचार्टा मिलना।

१२१०-१२४७—सिंघण यादव शिरूर (शिंगनापुर का संस्थापक)।

१२७२—महानुभाव चक्रधर।

१२७१-१२९५—मार्को पोलो की यात्रा।

१२९६-१३०६—अलाउद्दीन खिलजी, रामदेवराव यादव, ज्ञानदेव, हेमाद्रि और हेमाडपंत।

१३००-१४००—

१३२५-१३५१—मुहम्मद तुगलक।

१३३६—विजयनगर की स्थापना।

१३४७—बहमनी राज्य की स्थापना।

१३५०—नामदेव।

१३३६-१४०५—तैमूर लंग।

१३४०-१३८७—माधवाचार्य और सायणाचार्य।

१४००-१५००—

१३८०-१४२०—कबीर।

१४११—रामानंद की मृत्यु।

१३९४-१४६०—नौका-शास्त्रवेत्ता हेनरी के सुधार।

१४५५-१४८५—वार्स आफ दि रोज़ेज़।

१४३१—जोन आफ आर्क की मृत्यु।

१४५२-१४९८—ईसाई-धर्म-सुधारक सावानरोला

१४२४-१४८३—विजयनगर का देवराय।

१४५३—सुलतान मुहम्मद (द्वितीय) ने कुस्तुन्तुनियाँ जीती। बारूद का प्रयोग।

१४६८-७०—दुर्गादेवी की मृत्यु ; [illegible]।

१४८५-१५३३—चैतन्य का जीवनकाल।

१४९०—मुद्रणकला की उन्नति। लंदन में इस कला का उदय

इसी तरह पूरे भारतीय इतिहास का काल-विभाग निम्न लिखित विभागों में बँटा है—

१—प्राचीन या पौराणिक हिन्दू-काल ई० स० १००० तक।
२—मुस्लिम काल ई० स० १०००—१७०७।
३—महाराष्ट्र-शासन-काल ई० स० १६५०—१८१८।
४—ब्रिटिश शासन-काल ई० स० १८०३ से प्रारम्भ—

काल के विस्तार और ऐतिहासिक विषय की महत्ता की दृष्टि से प्राचीन हिन्दू-काल बड़े मार्के का है। इसका विस्तार भी बहुत अधिक है और विषय भी सरस है। इसमें अपने राष्ट्र के प्राचीन वैभव और उसकी योग्यता का परिचय मिलता है। लेकिन उसका क्रमवश पूरा वृत्तांत न मिलने से आज भी उसकी खोज की जा रही है।

(३) ऐतिहासिक खोज—भारत में अँगरेज़ों की सार्वभौम सत्ता पिछली शताब्दी के आरम्भ में स्थापित हुई है। इस समय से इतिहास-सम्बन्धी काग़ज़-पत्र सावधानी से एकत्र किये गये हैं। ऐसी व्यवस्था पहले नहीं थी। इसलिए भूतकाल के इतिहास की जो खोज की जाती है उसमें प्रमाण की कुछ न कुछ कमी रह जाती है। इससे इतिहास की प्रामाणिकता में कमी आ जाती है। महाराष्ट्र-काल की अपेक्षा उससे पूर्व के मुस्लिम शासन-काल के इतिहास की प्रामाणिकता अधिक अनिश्चित है। इसलिए महाराष्ट्र-काल के पूर्व का इतिहास अर्थात् १००० ईसवी सन् के बाद का इतिहास धीरे धीरे अधिक अनिश्चित सा होता जाता है। इस अपूर्णता के बढ़ने से इतिहास का निश्चित करने का काम दिन-दिन अधिक कठिन होता जाता है। इसकी खोज करने के लिए आज कल विशेष प्रयत्न हो रहा है। यह खोज का

राष्ट्र-द्वारा किये गये कार्यों पर संसार के इतिहास का अच्छा प्रकाश पड़ेगा और उसके कार्यों का मूल्य भी संसार को विदित होगा।

(४) प्राचीन आर्य—भारत के निवासियों में अनेक जाति के लोगों का मिश्रण है। लेकिन उनमें मुख्यतः आर्य और अनार्य का भेद है। इस देश में आर्यों के प्रवेश के बहुत समय पहले अनार्यों का प्रवेश हो चुका था। इन अनार्यों में पहले जो लोग आये उनका कद कुछ ठिगना और रंग काला था। इसलिए ये "निग्रटो" अर्थात् निग्रो जाति के कहे जाते हैं। इस जाति के लोग अब भी करांची के पश्चिम, स्याम, अराकान, फिलापिन्स इत्यादि में समुद्र-तट पर पाये जाते हैं। मछली पकड़ना ही उनका परम्परागत कार्य है। इसमें ये आज भी अत्यन्त निपुण हैं। इनके पूर्वज धातुओं का व्यवहार नहीं जानते थे। केवल पत्थर को पैना करके उससे ये लोग हथियार का काम लेते थे। इसी कारण इन लोगों को पाषाण युगीन का नाम मिला है। इस निग्रटो जाति के बाद भारत में ईशानकोण की घाटियों से एक दूसरी जाति आकर बसी। इस जाति के लोग यद्यपि पत्थर के हथियारों का ही उपयोग करते थे, तो भी ये अधिक प्रबल थे। गोफनों-द्वारा नोकदार पत्थर फेंक कर ये अपने शत्रु को मारते थे। इनके पास पत्थर के कुल्हाड़े व मिट्टी के बर्तन थे। इसलिए इन लोगों का नाम "नव-पाषाण-युगीन" जाति पड़ा। इस जाति के वंशज आज भी भिन्न भिन्न जङ्गलों में रहते हुए मिलते हैं। मध्य-भारत के संथाल, कोल, मुण्डा, कुर्क और दक्षिण में मिलने वाले शबर इत्यादि की गिनती इस नवपाषाण युगीन जातियों में की जाती है। ये लोग पत्थर बड़ा बड़ा अंगिरा व किनारों पर

में हिन्दुस्तानी नहीं फैला था। इन्हीं के संसर्ग से यहाँ खरोष्ठी-लिपि का प्रचार हुआ। प्राचीन लेखों में देवनागरी-लिपि के साथ साथ इस खरोष्ठी-लिपि का व्यवहार भी अधिक मिलता है इसीलिये यह कहा जाता है कि पंजाब के लोगों में ईरानी मिश्रण अधिक हुआ है। इसके बाद सिकन्दर के साथ साथ इस देश में ग्रीकों का अर्थात् यवनों का प्रवेश हुआ। और बाद को आर्यों का इनके साथ रोटीबेटी का भी सम्बन्ध शुरू हुआ। ईसवी सन् के सौ दो सौ वर्ष पहले ही मध्यएशिया की ओर से शक, हूणों, कुशान, गुर्जर इत्यादि लोगों की अनेक टोलियाँ इस देश में आईं। इनमें से अनेक लोगों ने इस देश में अपने राज्य भी स्थापित किये। विदेशी लोग हूण और सीथियन के नाम से साधारणतया प्रसिद्ध हैं। मुसलमानों का प्रवेश होने पर अरब, तुर्क, मुगल इत्यादि अन्य विदेशी लोग भी इस देश में आकर अपनी बस्तियाँ बना कर बस गये। इनका खुलासा हाल आगे दिया जायगा। सारांश यह कि भारत की वर्तमान प्रजा में विदेशी लोगों का किस प्रकार मिश्रण हुआ है, यह इससे समझ लेना चाहिए।

आर्यों के आने का विचार करने के विषय में एक दूसरी बात का भी ध्यान रखना चाहिए। वह यह कि भारत की पश्चिमोत्तर सीमा हिन्दुकुश नहीं थी। संस्कृति अथवा जातिनिर्णय की दृष्टि से हिन्दुकुश के उस पार अफगानिस्तान का प्रदेश भी भारत में शामिल था, अर्थात् पहले भारत की सीमा वंक्षु नदी (आक्सस) तक थी। पहले हिन्दुकुश के पार के प्रदेश में गांधार इत्यादि आर्यों के अनेक राज्य थे। वहाँ के निवासियों की भाषा वेदकाल की आर्यभाषा से निकली हुई

है। यहाँ के अनेक आर्य राजाओं की साम्राज्य सीमा अमु नदी तक रही है। मुगल-बादशाही में भी यह प्रदेश हिन्दुस्तान का ही एक भाग गिना जाता था। ब्रिटिश शासन काल में भी सरकारी कार्यवाइयों का प्रभाव इस प्रदेश पर भी पड़ता है।

(५) वेद, रामायण तथा महाभारत आर्य लोग भारत में जिस समय आये उस समय वे सभ्य थे। इस देश के रहनेवाले वन्य लोगों से उन्होंने झगड़ा किया और उन्हें जीत लिया। आज भी उन जंगली मनुष्यों की संतान अनेक पहाड़ी प्रदेशों में मिलती है। आर्यों ने पहले पंजाब को अपना निवास-भूमि बनाया। बाद को गंगा और यमुना के किनारे के प्रदेश भी उन्होंने बसाये। स्थान स्थान पर शहर और राज्य स्थापित किये। यज्ञ कर्म या देवताओं की पूजा के लिए वे जो जो मंत्र या गीत गाते थे उन सब के संग्रह को वेद कहते हैं। ये वेद प्राचीन संस्कृत-भाषा में हैं। इनमें चार-पाँच हज़ार वर्ष पहले के आर्यों के विचार, उनकी उस समय की परिस्थिति और सभ्यता का वर्णन है। वेदों के मंत्रों को सूक्त कहते हैं। प्रारंभ में ये सूक्त लिखित नहीं थे। वे लोगों को कण्ठस्थ थे। गुरु के मुख से सुनकर शिष्य इन्हें याद कर लेते थे। यही परम्परा थी। पहले भिन्न भिन्न ऋषियों के आश्रमों में भिन्न भिन्न सूक्तों के पाठ करने की रीति थी। लेकिन बाद को वे सब एकत्र कर लिये गये और एक बड़ा संग्रह तैयार हुआ। इस प्रकार सब सूक्तों के एक बड़े संग्रह का नाम संहिता पड़ गया। चार संहिता के नाम प्रसिद्ध हैं— ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। वेदों के बाद ब्राह्मण ग्रन्थ के ग्रन्थ बनाये गये, और फिर आरण्यक और अन्त में उपनिषद् [illegible] रचना हुई। इन सब ग्रन्थों के समूह को श्रुति

कहते हैं। इन का कोई रचयिता न होने के कारण ये अपौरुषेय कहलाते हैं। इनमें ऋग्वेद अधिक प्राचीन है। इसका अधिकांश भाग आर्यों के पंजाब में आने से पहले तैयार हो चुका था। इसमें एक हज़ार सूक्त हैं। इन सूक्तों में इन्द्र, अग्नि, सविता, वायु, वरुण, मरुत् और अश्विनी आदि देवताओं की स्तुतियाँ हैं। इसी प्रकार इन सूक्तों के भिन्न भिन्न रचयिता अनेक ऋषि हैं। इनके नाम विश्वामित्र, भरद्वाज, गौतम, अत्रि, वसिष्ठ, जमदग्नि, कश्यप आदि हैं।

आर्य लोग इस देश में जैसे जैसे दूर दूर तक फैलते गये, वैसे ही वैसे उनमें परस्पर मतभेद भी अधिक उत्पन्न होते गये। उनकी भिन्न भिन्न शाखाएँ बन गईं। ग्रन्थ-विस्तार अधिक हो गया, इससे उनके ऊपर लिखी गई व्याख्याएँ स्मरण रखना कठिन हो गया। इसलिए विस्तार कम करके थोड़े में बहु-अर्थ-बोधक वाक्यों के रचने की परिपाटी चल निकली। ऐसी रचनाओं को सूत्र कहते हैं। सूत्र तीन भागों में बँटे हैं—१—श्रौत सूत्र अर्थात् यज्ञ के नियम, २—गृह्यसूत्र अर्थात् गृहस्थ-धर्म से सम्बन्ध रखनेवाले नियम, ३—धर्मसूत्र अर्थात् समाज-सम्बन्धी नियम। इन मुख्य सूत्र ग्रन्थों के अतिरिक्त व्याकरण, न्याय, वेदान्त इत्यादि अन्य विषयों पर भी बाद को सूत्र-ग्रन्थों की रचना हुई। ऊपर जो धर्मसूत्र बताये गये हैं उन पर स्मृति नाम के विस्तृत ग्रन्थ बाद को लिखे गये। ये आर्यों के क़ानून थे। इस सम्बन्ध में मनु और याज्ञवल्क्य की स्मृतियाँ विशेष प्रसिद्ध हैं।

श्रुति और स्मृति के अतिरिक्त आर्यों के अन्य मुख्य ग्रन्थ इतिहास और पुराण भी हैं। इतिहास में 'रामायण' और

तीन वर्ण द्विज कहलाते हैं। इनके जीवन के चार भाग किये गये हैं। इनमें से पहले भाग का नाम ब्रह्मचर्य, दूसरे का नाम गृहस्थ, तीसरे का नाम वानप्रस्थ और चौथे का नाम संन्यास है। ये चारों भाग आश्रम कहलाते हैं। इसी सामाजिक और जीवन-सम्बन्धी व्यवस्था का नाम वर्णाश्रम-व्यवस्था है। प्रायः सभी विद्वान् शूर, सत्यप्रिय और धर्मनिष्ठ होते थे। प्रत्येक कुटुम्ब में अग्नि की पूजा होती थी। बड़े बड़े राजा यज्ञ करते थे। ऐसे यज्ञों में दूर दूर के विद्वान् लोग एकत्र होते थे, और वे अनेक गूढ़ विषयों पर वाद-विवाद करते थे। ऐसे वाद-विवादों में स्त्रियाँ भी सम्मिलित होती थीं। जनक नाम का एक राजा बड़ा तत्त्ववेत्ता था। उसकी राज-सभा में वेदान्त विषय की ही चर्चा हुआ करती थी। याज्ञवल्क्य ऋषि और जनक का संवाद उपनिषद् में दिया गया है। यह संवाद बड़ा ही आकर्षक, चतुरता-कलापूर्ण और विस्तृत है। अनेक स्थानों में ऋषियों के आश्रम थे। वहाँ छोटे-बड़े विद्यार्थी आकर विद्या पढ़ते थे।

(६) रामायण व महाभारत—ये दोनों ग्रन्थ भारतीय राष्ट्र को सदैव स्फूर्ति प्रदान करते रहेंगे। इनकी कथायें अनेक स्त्री-पुरुषों को विदित हैं। रामायण में लगभग चौबीस हज़ार श्लोक हैं। महाभारत इससे चौगुने से भी अधिक बड़ा है। रामायण वाल्मीकि ऋषि का रचा है और महाभारत को कृष्ण द्वैपायन वेदव्यास ने लिखा है किन्तु इस [illegible]

[illegible]

आचार-विचार, धर्म-कर्म और समाज-निर्माण में बड़े बड़े परिवर्तन होने लगे और भाषा, तत्त्वज्ञान व धर्माचार में नवीन विचार, नवीन शोध व उलट फेर होने लगे।

नोट—इस पाठ के साथ साथ बाल्मीकि की रामायण की मूल-कथा और महाभारत का संक्षिप्त वर्णन भी शिक्षक बतावें।

द्वितीय अध्याय

बौद्ध-काल

ई० स० पू० ६००-३२३

१—आर्यों की विद्योन्नति, २—जैनियों का उदय, महावीर वर्धमान
३—बौद्धों का उदय, गौतमबुद्ध, ४—सिकन्दर का भारत पर आक्रमण

(१) आर्यों की विद्योन्नति—ई० स० पू० ६०० से इधर का इतिहास बहुत कुछ क्रमबद्ध मिलता है और कई प्रसिद्ध राजपुरुषों के नाम भी मिलते हैं। मगधदेश में प्रद्योत नाम का राजवंश बहुत प्रसिद्ध हुआ। इस वंश का आदि-पुरुष शिशुनाग और चौथा पुरुष बिम्बसार दोनों ही अपने पराक्रम और यशोविस्तार के लिए इतिहास में प्रसिद्ध हैं (ई० स० पू० ५८२-५५४)। बिम्बसार ने मगध-राज्य की राजधानी राजगृह में स्थापित की। बिम्बसार के लड़के अजातशत्रु ने पाटलिपुत्र (पटना) को बसाया और २७ वर्ष तक शासन किया। अजातशत्रु के लड़के का नाम दर्शक था। यह वही पुरुष है जिसका नाम कवि भास ने अपने नाटक में दिया है। दर्शक के लड़के का नाम उदय था, जिसने कुसुमपुर बसाया था। यह नगर वर्तमान पटना के समीप ही था। इसके बाद नंदिवर्धन और महानन्दी ने ८३ वर्ष तक राज्य किया। ई० स० पू० ४१३

(२) जैनियों का उदय, महावीर वर्धमान—विहार-प्रान्त में तपश्चर्या की सुविधा के दो बड़े ही सुन्दर वन हैं। इन वनों में तपश्चर्या के आवश्यक साधन वर्तमान हैं। इसीलिए इस प्रान्त का नाम विहार अर्थात् तपोभूमि पड़ गया है। गया के आस पास की वह भूमि जहाँ फल्गू नदी बहती है, इस प्रान्त के बीचोबीच में है। इसमें राजगृह, नालंद, बुद्ध-गया इत्यादि प्राचीन काल के विख्यात स्थान हैं। इसी प्रान्त में जरासंध का पहले राज्य था। राजगृह में गरम जल के स्रोत हैं, जो आज भी बड़े लाभप्रद सिद्ध हो रहे हैं। फल्गू नदी का पानी इतना सफ़ेद और उसके बालुका कण इतने चमकदार हैं और उसका जल इतना शुद्ध माना जाता है कि तीर्थ-यात्रियों की तीर्थ-यात्रा बिना गया जाकर फल्गू नदी के जल से पितृ-तर्पण किये सफल नहीं कही जाती। इसी के समान पुण्य-प्रभाववाली दूसरी भूमि हिमालयपर्वत श्रेणी के नीचे तराई में है। दोनों ही वनों में मधु, फल, कंद इत्यादि जंगली आहारों की प्रचुरता है। इसलिए वहाँ जाकर कोई भी व्यक्ति अपने नगरग्रामादि सुख को भूल सकता है। इसीसे इस तपोभूमि में तपश्चर्या के बल पर अनेक विद्वान, साधु, कवि, तत्त्ववेत्ता बने और उन्होंने भारत का वैज्ञानिक भाण्डार पूर्ण कर दिया।

जैन-धर्म के आदि प्रवर्तक इक्ष्वाकु वंशी आदिनाथ माने जाते हैं। इनका एक नाम ऋषभनाथ भी है। महावीर वर्धमान इनके बाद बड़े प्रसिद्ध जैनाचार्य हुए। वर्धमान का जन्म ई० स० पू० ५४३ में उत्तर विहार अर्थात् विदेह-राज्य की राजधानी वैशाली में लिच्छवी नामक क्षत्रिय राजवंश में हुआ। वैशाली वर्तमान मुज़फ्फ़रपुर ज़िले में गंडकी के तट पर थी। उस समय उस राज्य में प्रजातन्त्रात्मक [illegible] शासन था। इस

अवस्था में शरीर-त्याग किया। उनके अनुयायियों की संख्या १४ हज़ार थी। बाद में चन्द्रगुप्त के शासन-काल में उनके सारे उपदेशों का संग्रह किया गया। उस संग्रह का कुछ भाग आज-कल भी पाली-भाषा में उपलब्ध है। उस भाग का नाम अंग है। कहा जाता है कि चन्द्रगुप्त ने भी जैनियों का अच्छा सम्मान किया था। उसकी आज्ञा से भद्रबाहु नाम का एक जैन-विद्वान् जैनियों का एक बड़ा संघ अपने साथ लेकर दक्षिण-भारत में गया और वहाँ जैन-पंथ का प्रचार किया। कुछ समय बीतने पर वे लोग मगध-राज्य को फिर लौटे। उस समय उत्तर के जैनियों से उनका घोर मत-भेद हो गया, जिससे दक्षिण के जैनी दिगम्बर और उत्तर के जैनी श्वेताम्बर—अर्थात् सफ़ेद वस्त्रवाले कहलाये। भारत में कुछ काल तक दिगम्बरों का प्रचार बहुत बढ़ा-चढ़ा रहा। दक्षिण में दिगम्बरी जैनियों की संख्या अधिक है और उत्तर में राजपूताना आदि प्रान्तों में श्वेताम्बर जैनी अधिक हैं। तीर्थ-स्थानों में दोनों सम्प्रदायों की धर्मशालाएँ बड़ी सुविधा-जनक बनी हैं। जैन-मतानुयायी इस देश में सभी प्रान्तों, सभी जातियों और सभी भाषा-भाषियों में मिलते हैं। ये लोग स्वभाव से ही सात्त्विक, परोपकारी और व्यापार प्रवीण होते हैं। स्थान स्थान पर इनके विशाल देव-मन्दिर और धर्मशालाएँ तथा लोकोपयोगी अनेक संस्थाएँ खुली हुई हैं। आबू पहाड़ पर बने हुए जैन-मन्दिर को जिसने देखा है वह तत्कालीन जैनियों की शिल्पकला-सम्बन्धी उन्नति का अनुमान कर सकता है। जीव-हिंसा से बचने के लिए ये लोग दिन ही दिन में भोजन कर लेते हैं। पठन करते समय मुँह पर कपड़ा बाँधने का इनका नियम प्रसिद्ध ही है।

अतएव उन्होंने तपस्या करनी छोड़ दी। यह देख उनके पाँचों साथी अपने घरों को चले गये और सिद्धार्थ अकेले ही गया के समीप वन में रह कर अपना कालयापन करने लगे। इसी समय वे गया के दक्षिण में उरुवेला नामक स्थान में गये। वहाँ एक अश्वत्थ-वृक्ष के नीचे उन्हें परम ज्ञान की प्राप्ति हो गई। इससे उनकी सारी शंकाओं का समाधान हो गया। इसीसे उस वृक्ष का नाम बोधि-वृक्ष और उस स्थान का नाम बुद्ध गया पड़ गया। यहाँ का बुद्ध का मन्दिर भूमि में दब गया था। वह अब खोद कर बाहर निकाला गया है और उसका जीर्णोद्धार भी हो गया है। गया से गौतम बुद्ध काशी के समीप सारनाथ नामक स्थान को गये। वहाँ उन्होंने मृग-दाव नामक बाग़ में अपने धर्म का उपदेश देना प्रारम्भ किया। उस स्थान पर उन्हें पहले पाँच शिष्य मिले। फिर उत्तरोत्तर शिष्यों की संख्या के बढ़ जाने से उनकी शिष्य-मण्डली बहुत बड़ी हो गई। कोशल-राज्य का राजा प्रसेनजित् और मगध-राज्य का राजा बिम्बसार गौतम बुद्ध के शिष्य बन गये। उनको आश्रय देकर इन राजाओं ने अपने राज्य में उनके धर्म का प्रचार किया। नैपाल की तराई में कुशी-नगर नामक स्थान में ई० स० पू० ४८७ के लगभग गौतम बुद्ध ने शरीर त्याग किया। कपिलवस्तु, बुद्ध गया, सारनाथ का "मृगदाव" बाग़ और कुशीनगर बौद्ध-धर्म के तीर्थ-स्थल समझे जाते हैं।

...दोनों धर्मों में परस्पर अधिक साम्य है। ...को हिन्दू-धर्म के अन्तर्गत ही समझना ...मानने का कोई कारण नहीं ...तथा गौतमबुद्ध ने

अतएव उन्होंने तपस्या करनी छोड़ दी। यह देख उनके पाँचों साथी अपने घरों को चले गये और सिद्धार्थ अकेले ही गया के समीप वन में रह कर अपना कालयापन करने लगे। इसी समय वे गया के दक्षिण में उरुवेला नामक स्थान में गये। वहाँ एक अश्वत्थ-वृक्ष के नीचे उन्हें परम ज्ञान की प्राप्ति हो गई। इससे उनकी सारी शंकाओं का समाधान हो गया। इसीसे उस वृक्ष का नाम बोधि-वृक्ष और उस स्थान का नाम बुद्ध गया पड़ गया। यहाँ का बुद्ध का मन्दिर भूमि में दब गया था। वह अब खोद कर बाहर निकाला गया है और उसका जीर्णोद्धार भी हो गया है। गया से गौतम बुद्ध काशी के समीप सारनाथ नामक स्थान को गये। वहाँ उन्होंने मृग-दाव नामक बाग़ में अपने धर्म का उपदेश देना प्रारम्भ किया। उस स्थान पर उन्हें पहले पाँच शिष्य मिले। फिर उत्तरोत्तर शिष्यों की संख्या के बढ़ जाने से उनकी शिष्य-मण्डली बहुत बड़ी हो गई। कोशल-राज्य का राजा प्रसेनजित् और मगध-राज्य का राजा बिम्बसार गौतम बुद्ध के शिष्य बन गये। उनको आश्रय देकर इन राजाओं ने अपने राज्य में उनके धर्म का प्रचार किया। नैपाल की तराई में कुशी-नगर नामक स्थान में ई० स० पू० ४८७ के लगभग गौतम बुद्ध ने शरीर त्याग किया। कपिलवस्तु, बुद्ध गया, सारनाथ का "मृगदाव" बाग़ और कुशीनगर बौद्ध-धर्म के तीर्थ-स्थल समझे जाते हैं।

बौद्ध और जैन दोनों धर्मों में परस्पर अधिक साम्य है। वास्तव में दोनों ही धर्मों को हिन्दू धर्म के अन्तर्गत ही समझना चाहिए। हिन्दू-धर्म से इनको भिन्न मानने का कोई कारण नहीं है। हिन्दू धर्म के तत्त्वों को ही महावीर तथा गौतमबुद्ध ने

अधिक स्पष्ट रूप में जनता के सामने रक्खा और उनके अवनति-काल तक के जो विशिष्ट तत्त्व-ग्रन्थ थे उनको हिन्दुओं ने अपने तत्त्व-ज्ञान में सम्मिलित कर लिया। उपनिषदों में दिये गये तत्त्वों को ही गौतम बुद्ध ने अंगीकार किया था। केवल यज्ञ आदि कर्म और वेद-प्रमाण को उन्होंने मान्य नहीं माना। बौद्ध-धर्म का प्रचार गौतम बुद्ध की मृत्यु के बाद विशेष रूप से हुआ। किसी वस्तु की कामना न करके निर्वाण पाना ही बौद्ध-धर्म का ध्येय है। इसको प्राप्त करने के लिए इस धर्म में अष्टविध साधन बतलाये गये हैं। शाक्यों के राज्य में लोक-सत्ता-द्वारा शासन होता था। उसी पद्धति को बुद्ध ने अपने संघ का कार्य-भार चलाने में अंगीकार किया। बुद्ध का यह उपदेश था कि मनुष्य के जन्म से ही उसको उच्च या नीच पद नहीं प्राप्त होता, बल्कि अपने कर्म-द्वारा जीव उच्चपद या निम्नपद प्राप्त करता है। इस उपदेश के कारण बौद्ध-धर्म का प्रचार विदेशों में अधिक प्रभावशाली बना और आज-कल जिस संघ-शक्ति की आवश्यकता है उसका वह पोषक बन गया। यह बात आगे दिये पद्यांश से स्पष्ट होती है—

> सब्ब पापस्य अकरणं कुसलस्स उपसम्पदा।
> सचित्त परियोदपनं एतं बुद्धस्स सासनम्॥

कोई भी पाप न करना, सत्कार्य की वृद्धि करना, और चित्त को नियम के बन्धन में रखना, यही बुद्ध का अनुशासन है।

बौद्ध-धर्म का प्रभाव लगभग एक हज़ार वर्ष तक भारत में बड़े ज़ोर का रहा। लेकिन इसका प्रचार विदेशों में—चीन जापान, अथवा भारत के अन्य पूर्ववर्ती देशों तथा उनके निकट के द्वीपों में—अधिक है। आज पृथिवी भर में अन्य धर्मों की अपेक्षा बौद्ध-धर्मावलम्बियों की संख्या अधिक है। गौतम बुद्ध के

मर जाने के बाद उनके अनुयायियों ने पटना के समीप एक गुफा में भारी सभा करके उनके उपदेशों का संग्रह किया और उसे तीन भागों में विभक्त किया। इनको पिटक या करंडक कहते हैं। इस मण्डली ने बौद्ध-धर्म का प्रचार बड़े ज़ोरों के साथ किया। इसके ठीक सौ वर्ष बाद बौद्धमतानुयायियों की दूसरी बड़ी सभा बैठी। उस समय बौद्ध लोग दो दलों में बँट गये। इनमें से एक पक्ष ने उत्तर में और दूसरे पक्ष ने दक्षिण में बौद्ध-धर्म का प्रचार किया। इसके सौ वर्ष बाद चक्रवर्ती नरेश अशोक ने ई० स० पू० २४२ में बौद्ध-विद्वानों की तीसरी सभा की और उसने धर्म के प्रचार में एक नवीन उत्साह का सञ्चार किया। इसके लगभग ४०० वर्ष बाद राजा कनिष्क ने बौद्ध-धर्म के प्रमुख विद्वानों को एकत्र कर एक चौथी सभा की। इस सभा में फिर ग्रन्थ-संग्रह का कार्य किया गया। बौद्धों के प्रायः सभी ग्रन्थ पाली-भाषा में हैं। गौतम बुद्ध ने पाली-भाषा में ही लोगों को उपदेश दिया था। बौद्धों और जैनियों के ग्रन्थों का भांडार बहुत बड़ा है। इन दोनों के अनेक उत्तमोत्तम ग्रन्थ बने और इनमें अनेक प्रसिद्ध ग्रन्थकार हुए। यदि उनका संशोधन करने के लिए भारत के बाहर के ग्रन्थ-भांडार की खोज की जाय तो भारत के प्राचीन इतिहास की अपरिमित सामग्री मिल सकती है। भारत में जैनियों की वर्तमान संख्या लगभग १५ लाख है। जैन धर्म का इतना विस्तृत प्रचार भारत में नहीं हुआ जैसा कि बौद्ध-धर्म का हुआ था।

(५) सिकन्दर का भारत पर आक्रमण—सभ्यता ज्ञान और संस्कृति का प्रचार भारत के ही द्वारा अन्य देशों में हुआ

सिकन्दर

लड़ाई लड़ना ही उत्तम समझा। इस पर सिकन्दर ने चढ़ाई की। इन दोनों की लड़ाई झेलम के किनारे हुई। इस लड़ाई में पोरस की हार हुई और वह सिकन्दर के हाथ कैद हुआ। इस अवसर पर सिकन्दर ने उससे पूछा—मैं तुम्हारे साथ कैसा बर्ताव करूँ? पोरस ने निर्भीकता से उत्तर दिया—जिस प्रकार राजा राजा के साथ व्यवहार करता है। इस उत्तर से सिकन्दर संतुष्ट हुआ और पोरस को उसका राज्य लौटा दिया। सिकन्दर की इच्छा थी कि वह सारे भारत को अपने अधीन करे, लेकिन उसके सैनिक स्वदेश से बहुत दूर आ जाने से घर लौटने के लिए व्याकुल हो रहे थे। इसलिए वह पञ्जाब से लौट पड़ा। वह सिन्धुनदी के मुहाने तक नावों द्वारा आया। वहाँ से समुद्र मार्ग द्वारा स्वदेश को लौटा (अक्टोबर ३२५ पू०)। लेकिन ग्रीस पहुँचने के पहले ही बेबिलन नामक नगर में उसे ज्वर ने आ घेरा और वहीं ३२ वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गई (जून ई० स० पू० ३२३)।

ग्रीक लोगों का यह आक्रमण भारत के इतिहास में बड़े ही महत्व का है। सिकन्दर के साथ ग्रीस देश के अनेक विद्वान् भारत में आये थे। उन लोगों ने तत्कालीन भारत की स्थिति का आँखों देखा वर्णन किया है। उनके वर्णन पढ़ कर भारत की तत्कालीन अवस्था का अच्छा ज्ञान होता है। सिकन्दर भारत से अनेक विद्वान, पण्डित और बड़े बड़े ग्रन्थ अपने साथ ग्रीस-देश ले गया था। इसी प्रकार इस आक्रमण ने योरपीयों को भारत का ज्ञान करा दिया और [illegible] देशों के [illegible] इन देशों में एक दूसरे [illegible]

[illegible]

सेल्यूकस नेकटर के हिस्से में आया। इस राज्य पर सेल्यूकस नेकटर ने ई० स० पू० ३१२-२८० तक राज्य किया। मगध-देश का राजा चन्द्रगुप्त मौर्य उसका समकालीन था। चन्द्रगुप्त ने इसके पूर्व ही पञ्जाब व सिन्धु के पश्चिम-तटस्थ राज्यों को जीत कर अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया था। इन राज्यों को चन्द्रगुप्त से छीनने के लिए सेल्यूकस ने भारत पर चढ़ाई की थी (ई० स० पू० ३०५)। लेकिन चन्द्रगुप्त से वह हार गया। अतएव उसने अफ़ग़ानिस्तान का समूचा प्रांत चन्द्रगुप्त को देकर चन्द्रगुप्त से मित्रता कर ली और उसके साथ अपनी पुत्री का विवाह भी कर दिया। इसके बाद इन दो राजाओं में परस्पर स्नेह-भाव बना रहा। इन दोनों के राज्य एक दूसरे से मिले हुए थे, बीच में हिन्दूकुश का पहाड़ था। चन्द्रगुप्त के दरबार में सेल्यूकस का राजदूत मेगस्थनीज़ ८ वर्ष तक रहा। मेगस्थनीज़ का लिखा हुआ तत्कालीन भारत का वर्णन इस समय प्राप्य नहीं है। केवल उसके ग्रन्थ से उद्धृत किये हुए कुछ अंश अन्य ग्रन्थकारों के ग्रन्थों में मिलते हैं। ये उद्धृतांश भी बड़े महत्व के हैं। इनके पढ़ने से चन्द्रगुप्त की राज्य-व्यवस्था और उसके वैभव का पता लगता है। सेल्यूकस के बाद २०० वर्षों तक ग्रीक लोगों का भारत के साथ अच्छा व्यवहार बना रहा।

को तक्षशिला भेज कर अशोक को अपने पास पाटलिपुत्र को बुला लिया। ऐसी ही अवस्था में ई० स० पू० २७५ में बिन्दुसार की मृत्यु हो गई। इससे राधागुप्त की सहायता पाकर अशोक राजसिंहासन पर बैठ गया और अपने भाई को मार कर अपनी सत्ता स्थापित की।

उस समय कलिङ्ग-देश स्वतन्त्र था। व्यापार के कारण उसकी बड़ी उन्नति हो गई थी। यहाँ के व्यापारी जहाज़ चलाने की विद्या में अधिक निपुण थे। पूर्व के द्वीपों में आर्य-सभ्यता का प्रचार इन कलिङ्गवालों ने ही किया था। आज भी उन द्वीपों के रहनेवाले अपने को क्लिङ्ग ही बतलाते हैं। अशोक के शासन के पहले तीन वर्ष घरेलू लड़ाई-झगड़ों में बीते। इसके बाद ई० स० पू० २७० में उसका राज्याभिषेक हुआ। पड़ोस के कलिङ्ग-देश पर चढ़ाई करके उसने यह देश भी जीत लिया। यहाँ के राजा को पराजय कर प्रजा का बहुत नाश किया। इस युद्ध में अच्छे अच्छे साधु, पण्डित और विद्वानों के भी प्राण गये। उस हृदय-द्रावक हत्याकांड का दृश्य देख कर उसे विजय के आनन्द के स्थान में बड़ा पश्चात्ताप हुआ और इसका प्रभाव उसके चित्त पर इतना पड़ा कि उसने अपना जीवन ही बदल दिया।

कलिङ्ग जीतने के बाद ही अशोक ने बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। अब उसने तलवार की अपेक्षा धर्म की दिग्विजय करने का निश्चय किया और धीर शासन धर्मोपकार के कामों में लिप्त कर उसने सम्राट् की पदवी सार्थक कर दी। उसने राज्य भर में ऐसा करके स्थान स्थान पर धर्मप्रचार की आज्ञाएँ निकलीं। ये आज्ञाएँ आज भी शिला स्तम्भ में जहाँ तहाँ खुदी मिलती हैं। काठियावाड़ में गिरनार, पेशावर के समीप मनसहरा और शाहबाजगढ़ी,

को तक्षशिला भेज कर अशोक को अपने पास पाटलिपुत्र को बुला लिया। ऐसी ही अवस्था में ई० स० पू० २७३ में बिन्दुसार की मृत्यु हो गई। इससे राधागुप्त की सहायता पाकर अशोक राजसिंहासन पर बैठ गया और अपने भाई को मार कर अपनी सत्ता स्थापित की।

उस समय कलिङ्ग-देश स्वतन्त्र था। व्यापार के कारण उसकी बड़ी उन्नति हो गई थी। वहाँ के व्यापारी जहाज़ चलाने की विद्या में अधिक निपुण थे। पूर्व के द्वीपों में आर्य-सभ्यता का प्रचार इन कलिङ्गवालों ने ही किया था। आज भी उन द्वीपों के रहनेवाले अपने को क्लिङ्ग ही बतलाते हैं। अशोक के शासन के पहले तीन वर्ष घरेलू लड़ाई-झगड़ों में बीते। इसके बाद ई० स० पू० २७० में उसका राज्याभिषेक हुआ। पड़ोस के कलिङ्ग-देश पर चढ़ाई करके उसने यह देश भी जीत लिया। वहाँ के राजा को परास्त कर प्रजा का बहुत नाश किया। इस युद्ध में अच्छे अच्छे साधु, पण्डित और विद्वानों के भी प्राण गये। उस हृदय-द्रावक हत्याकांड का दृश्य देख कर उसे विजय के आनन्द के स्थान में बड़ा पश्चात्ताप हुआ और इसका प्रभाव उसके चित्त पर इतना पड़ा कि उसने अपना जीवन ही बदल दिया।

कलिङ्ग जीतने के बाद ही अशोक ने बौद्ध-धर्म की दीक्षा ली। अब उसने तलवार की अपेक्षा धर्म की दिग्विजय करने का निश्चय किया और शेष जीवन लोकोपकार के कार्यों में बिता कर उसने सम्राट् की पदवी सार्थक कर दी। उसने राज्य भर में दौरा करके स्थान स्थान पर धर्मप्रचार की आज्ञाएँ निकालीं। ये आज्ञाएँ आज भी शिला-लेखों में जहाँ तहाँ खुदी मिलती हैं। काठियावाड़ में गिरनार, पेशावर के समीप मनसेरा और शाहबाज गढ़ी,

हज़ार थी। जहाँ जहाँ अशोक गया, वहाँ वहाँ किसी न किसी रूप में अपना स्मारक उसने बनवाया। ये स्मारक अभी तक मिलते हैं। मध्य-एशिया में अनेक लोगों को भेज कर वहाँ उनका उपनिवेश बसाया। सीरिया, मिस्र जैसे सुदूरवर्ती देशों में अशोक के दूतों के पहुँचने के प्रमाण मिलते हैं। नर्मदा के दक्षिण में महाराष्ट्र पर भी उसका थोड़ा बहुत प्रभाव था। विदेशों से अनेक उपयुक्त कलाकौशल लाकर उसने यहाँ उनका प्रचार किया। इस प्रकार अशोक ने बुद्ध-संघ स्थापित कर ई० स० पू० २३६ में देहत्याग किया। संसार के इतिहास में अशोक के समान पराक्रमी और चक्रवर्ती राजपुरुष का उदाहरण मिलना दुर्लभ है। अपनी इस अद्वितीयता के लिए ही अशोक को अर्हत पदवी मिली थी।

अशोक के मरने पर उसके पुत्र कुनाल और उसके नाती दशरथ ने शासन किया, लेकिन राज्य की अवनति होने लगी और कलिङ्ग, अफ़गानिस्तान (बाल्हीक) इत्यादि प्रान्त साम्राज्य से अलग हो गये। इस वंश के अन्तिम राजा बृहद्रथ मौर्य को उसके एक ब्राह्मण सेनापति ने ई० स० पू० १८४ में मार डाला। इससे मौर्य-वंश का अन्त हो गया। इसके बाद भी मौर्य-वंश का शासन मगध में एक सौ वर्ष तक चलता रहा। सातवीं शताब्दी में गौड़ेश्वर शशांक ने बुद्ध-गया के बोधि-वृक्ष को काट डाला था। उसे अशोक के ही एक वंशधर पूर्णवर्मा ने फिर आरोपित किया था। आज भी उस जगह पर एक बोधि-वृक्ष खड़ा है।

मौर्य के बाद शुङ्ग घराने का उदय हुआ। इस घराने का प्रवर्तक पुष्यमित्र था। इस राजवंश का शासन ई० स० पू०

देशाचीं भाषाएँ संस्कृत से निकली हैं। इनका विपुल ग्रन्थ-भांडार अशोक के बाद ४०० वर्षों में निर्माण हुआ। पुराणों की रचना भी इसी काल में हुई थी।

(४) गुप्तों का साम्राज्य—मगध-देश और उसकी राजधानी पाटलिपुत्र की उन्नति ई० स० ६०० से बराबर एक समान होती गई थी। बीच में केवल कुछ समय के लिए बाधा पड़ गई थी। उस काल में प्रद्योत, नन्द, मौर्य और शुंग इत्यादि ४ राजवंश हो चुके थे। बाद को कुशान-वंश के समय मगध का वैभव नष्ट हो गया था और राजधानी पाटलिपुत्र की शोभा घटकर चली गई थी। जब कुशान-शासकों की भी शक्ति क्षीण हो रही थी तब पाटलिपुत्र में चन्द्रगुप्त नाम के एक व्यक्ति की बड़ी उन्नति हो रही थी। उसने लिच्छवी-राज-कुल की कन्या कुमारदेवी के साथ विवाह कर अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया। उसके सोने के सिक्कों पर राजा-रानी दोनों के नाम अङ्कित हैं। उसने गुप्त-वंश का नवीन शक जारी किया। उसकी गणना ३१९-३२० ई० से होती है। यह वर्ष-गणना उत्तर-भारत में अधिक काल तक जारी रही।

सन ३३० के लगभग चन्द्रगुप्त की मृत्यु होगई और उसका पराक्रमी लड़का समुद्रगुप्त गद्दी पर बैठा। उसने सन ३७५ तक राज्य किया और समस्त उत्तर भारत जीत लिया फिर दक्षिण के पूर्वी समुद्रतट पर काञ्ची तक आक्रमण करके वहाँ के राजाओं से कर वसूल किया। समुद्रगुप्त के बाद द्वितीय चन्द्रगुप्त गद्दी पर बैठा। उसने मालवा और सौराष्ट्र को अपने राज्य में मिला कर विक्रमादित्य की पदवी धारण की और

गुप्त-साम्राज्य

गु प्त सा म्रा ज्य

बंगाल की खाड़ी

काबुल

पेशावर

तक्षशिला

लाहौर

सिन्धु नदी

मथुरा

उज्जैन

नर्मदा नदी

सोमनाथ

सूरत

गोदावरी नदी

कृष्णा नदी

सिंहल द्वीप

पैशाची भाषायें संस्कृत से निकली हैं। इनका विपुल ग्रन्थ-भांडार अशोक के बाद ५०० वर्षों में निर्माण हुआ। पुराणों की रचना भी इसी काल में हुई थी।

(४) गुप्तों का साम्राज्य—मगध-देश और उसकी राजधानी पाटलिपुत्र की उन्नति ई० स० ६०० से बराबर एक समान होती गई थी। बीच में केवल कुछ समय के लिए बाधा पड़ गई थी। उस काल में प्रद्योत, नन्द, मौर्य और शुंग इत्यादि ४ राजवंश हो चुके थे। बाद को कुशान-वंश के समय मगध का वैभव नष्ट हो गया था और राजधानी पाटलिपुत्र की शोभा पेशावर चली गई थी। जब कुशान शासकों की भी शक्ति क्षीण हो रही थी तब पाटलिपुत्र में चन्द्रगुप्त नाम के एक व्यक्ति की बड़ी उन्नति हो रही थी। उसने लिच्छवी-राज-कुल की कन्या कुमारदेवी के साथ विवाह कर अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया। उसके सोने के सिक्कों पर राजा-रानी दोनों के नाम अङ्कित हैं। उसने गुप्त वंश का नवीन शक जारी किया। उसकी गणना २६२-३०० ई० से होती है। यह वर्ष-गणना उत्तर भारत में अधिक काल तक जारी रही।

सन ३३० के लगभग चन्द्रगुप्त की मृत्यु हो गई और उसका पराक्रमी लड़का समुद्रगुप्त गद्दी पर बैठा। उसने सन ३८० तक राज्य किया और समस्त उत्तर भारत जीत लिया फिर दक्षिण के [illegible] समुद्रतट [illegible] काञ्ची तक आक्रमण करके वहाँ के राजाओं से कर [illegible] लिया। समुद्रगुप्त के बाद द्वितीय चन्द्रगुप्त [illegible] बैठा। उसने मालवा और सौराष्ट्र को अपने [illegible] में [illegible] कर विक्रमादित्य की पदवी धारण की और

पेशावर
सिन्धु नदी
गु प्त सा म्रा ज्य
उज्जैन
नर्मदा नदी
गोदावरी नदी
कृष्णा नदी
बंगाल की खाड़ी
अ र ब सा ग र
गुप्त साम्राज्य

प्राप्त करने के लिए विदेशों के अनेक प्रवासी समय समय पर भारत में आये। इसी तरह फाहियान नाम का विद्वान् चीनी यात्री बौद्ध धर्म की जानकारी प्राप्त करने उत्तर के भू-मार्ग से भारत में आकर सीलोन और जावा होकर जल-मार्ग से स्वदेश को लौट गया था। उसकी यात्रा सन् ३९९ और ४१४ के बीच में हुई थी। उसका लिखा हुआ भारत की अवस्था का वर्णन आज भी मिलता है। उससे विदित होता है कि गुप्त काल में भारत उन्नति पर था। सुधार, सौंदर्य, विद्वत्ता, कला इत्यादि सभी उन्नत अवस्था को प्राप्त हो चुके थे। धनिकों से चंदा लेकर ग़रीबों को मुफ्त दवा बाँटने का प्रबन्ध योरप में पहले पहल १७वीं शताब्दी में प्रारंभ हुआ था। लेकिन यह प्रबन्ध गुप्तों के ही समय में इस देश में शुरू हो गया था। लोगों का व्यवहार बड़ी सचाई का होता था। अपराधियों को मृत्यु दण्ड देने की प्रथा यहाँ न थी। यात्रियों के ठहरने के लिए यहाँ धर्मशालाओं का अच्छा प्रबंध था। मद्यपान तो बिलकुल ही बंद था। इस प्रकार की अत्यन्त उपयुक्त जानकारी फाहियान की लिखी पुस्तक से होती है। मध्य-एशिया से लगाकर दक्षिण और पूर्व समुद्र तक के विस्तीर्ण भू-भाग में आर्य संस्कृति का साम्राज्य फैल चुका था। इसका केन्द्र भारत था। इस संस्कृति का परिचय पाकर विदेशी लोग अपने को धन्य मानते थे। भारत में संस्कृति-संबंधी स्वार्थी और विध्वंसक भावों का उस समय तक उदय नहीं हुआ था। इसकी उत्पत्ति मुसलमानों के आक्रमण से इस देश में हुई।

चंद्रगुप्त के लड़के कुमारगुप्त ने ई० स० ४५५ तक शासन किया। इसके बाद स्कन्दगुप्त ने शासन करना शुरू किया। इसके शासन में पहले ही हूण लोगों ने भारत पर आक्रमण

और छोटे लड़के का नाम हर्षवर्धन था। जिस समय हूणों ने चढ़ाई की थी, ये दोनों भाई उनसे लड़ने के लिए गये थे। इसी बीच में प्रभाकरवर्धन की मृत्यु हो गई। इधर मालवा के राजा देवगुप्त ने कन्नौज पर चढ़ाई की और ग्रहवर्मा को मार कर उसकी रानी राज्यश्री को क़ैद कर लिया। इसके बाद यह थानेश्वर की ओर बढ़ा। राज्यवर्धन हूणों को परास्त कर लौटा आ रहा था। पिता की मृत्यु होने, बहनोई के मारे जाने और राज्य पर शत्रु की चढ़ाई होने के समाचार उसे मार्ग में ही मिले। उसने सीधा आकर पहले देवगुप्त को मार डाला। इतने में ही देवगुप्त की सहायता के लिए उसका मित्र बङ्गाल का शशाङ्क आ गया। उसने कपट करके राज्यवर्धन को मार डाला। इन घटनाओं का समाचार हर्षवर्धन को मिला। उसने शशांक की और मालवा की सेनाओं को मार भगाया और विन्ध्याचल के जङ्गलों में भटकती हुई राज्यश्री को बंधन-मुक्त करके उसे अपने साथ लिवा लिया। यह सब कार्य बहुत थोड़े समय में ही अर्थात् ई० स० ६०६-६०६ के बीच में हुआ। आगे यही हर्ष चक्रवर्ती राजा हुआ और अपनी बहन राज्यश्री की सहायता से उसने कन्नौज में रहकर अपना राजकाज सँभाला। बाण कवि ने हर्षचरित लिखा है। इसमें उसका सब वर्णन दिया गया है। उस समय का हाल चीनी-यात्री ह्युनसांग के लेखों में भी मिलता है।

हर्ष के समय में ही दूसरा चीनी-यात्री ह्युनत्सांग भारत में आया था। वह इस देश में सन ६३० से सन ६४० तक रहा। उसने कुछ दिन तक भारत का भ्रमण किया और उसका हाल अपनी पुस्तक में लिखा। उससे हर्ष के समय का पता भी

हर्ष का साम्राज्य
सन् ६४० का भारत
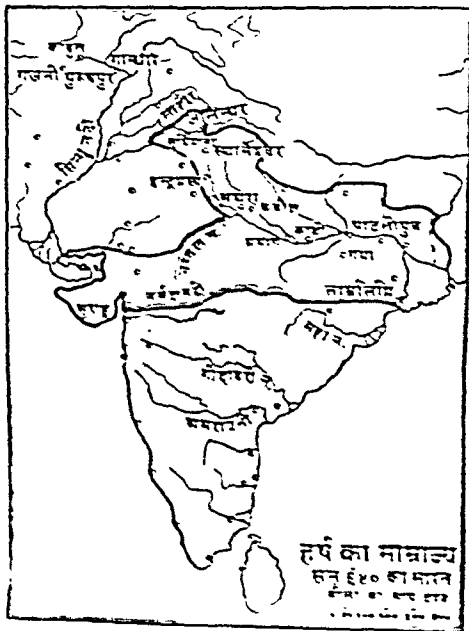
मुसलमानों की विजय के पूर्व राजपूत-भारत
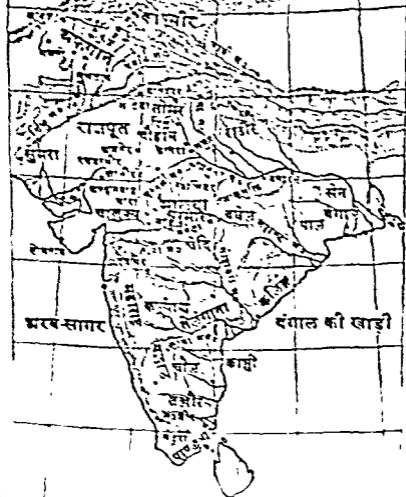
वह लुप्त होकर कन्नौज को प्राप्त हुई। लेकिन वहाँ सतत चक्रवर्तित्व स्थापित करनेवाले राजे सम्राट् हर्ष के बाद न होने से वह महिमा हट कर कुछ समय के लिए काश्मीर-राज्य की राजधानी को प्राप्त हुई। इसके बाद कुछ गौड़ के पालराजवंश में और कुछ मारवाड़ के गुर्जर-प्रतीहारों में बँट गई। ये प्रतीहार ई० स० ७२५ से १०१८ तक उत्तर-भारत में प्रबल बने रहे। इस काल में इस वंश में नागभट्ट, भोज, महीपाल इत्यादि अनेक पराक्रमी राजे उत्पन्न हुए। इनको परिहार भी कहते हैं। इस वंश का राजा राज्यपाल कन्नौज में उस समय राज्य करता था। इसी के समय महमूद-ग़ज़नवी ने कन्नौज पर आक्रमण करके उसको परास्त किया। बाद को राठोड़वंशी राजपूत राजाओं ने कन्नौज का राज्य जीत लिया। इस वंश में सात राजे हुए। इनमें से राजा जयचंद जिस समय राज्य करता था, उस समय मुहम्मद गोरी ने कन्नौज के राज्य पर चढ़ाई कर उसे अपने अधिकार में किया था। इसी वंश के एक राजा ने बाद को जोधपुर के राज्य की स्थापना की। आज-कल राजपूतों के अनेक राज्य क़ायम हैं। इनकी उत्पत्ति प्राचीन व मध्यकालीन क्षत्रिय व अन्य पराक्रमी राजवंशों से हुई है। राजपूत का शुद्ध रूप है राजपुत्र। उनका क्षात्र-तेज हज़ारों वर्षों से चमक रहा है। आजकल भावनगर के समीप जो "वळा" नामक राज्य है वह पहले वल्लभीपुर के नाम से प्रसिद्ध था। वह ई० स० ४८०-७६६ तक स्वतंत्र राज्य था। इसके बाद "पट्टन" में दो सौ वर्ष तक वहाँ के राजवंश का शासन गुजरात पर रहा। बाद को इस राजवंश को दक्षिण के चालुक्य राजाओं ने जीत लिया (सन ९४३)। चालुक्य वंश में पहला राजा मूलराज बड़ा पराक्रमी हुआ। उसका लड़का चामुंड पट्टन में

मुसलमानों की विजय के पूर्व
राजपूत-भारत

राजपूत

अरब सागर

बंगाल की खाड़ी
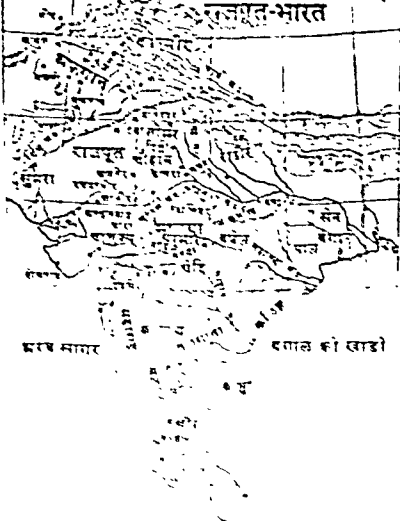
दिल्ली में सन् ७३६ में अनंगपाल ने तोमर या तुवर-वंश के राजपूत-राज्य की स्थापना की। इस वंश के उन्नीस राजाओं ने दिल्ली में शासन किया। निस्सन्तान होने के कारण अन्तिम राजा ने अपने नाती अर्थात् अजमेर के चौहान-वंश के पृथिवीराज को दिल्ली की गद्दी दे दी। इस पृथिवीराज को मुहम्मद गोरी ने सन् ११९३ में जीता। महाराष्ट्र-देश के राजवंशों का वर्णन आगे तीसरे भाग में किया जायगा।

बिलकुल दक्षिण में पाण्ड्य, चोल और केरल नाम के बड़े पुराने राज्य थे। काञ्ची अर्थात् चोल मंडल में पल्लवों का राज्य बहुत दिनों से था। चोल-मंडल का ही अंग्रेज़ी अपभ्रंश कारोमण्डल है। मैसूर-प्रान्त में "गंग" नाम का एक घराना था। उसके प्रधान पुरुष चामुण्डराय ने श्रवण बेल गोला में गोमत की विशाल पाषाण मूर्ति सन् ९८३ में तैयार कराई थी। यह मूर्ति अपूर्व है। द्वार समुद्र में होयसल बल्लवों का राज्य मुसलमानों के प्रवेश-काल तक प्रबल था। अंत में सुलतान अलाउद्दीन खिलजी के सेनापति मलिक काफूर ने दक्षिण के सभी राज्यों को जीत लिया (सन् १३१०)।

पाण्ड्य-वंशी राजाओं का रोमन लोगों के साथ मैत्री का व्यापार होता था। इनकी राजधानी मथुरा मीनाक्षी थी। इसी प्रकार चोलों की राजधानी तञ्जोर थी। इस वंश का उत्कर्ष राजराज के समय में हुआ (सन् ९८५-१०१०)। इसने सिंहल-द्वीप जीत लिया था। इतना ही नहीं, बल्कि वर्तमान मद्रास प्रान्त का अधिकांश भाग भी इसी के अधीन था। पश्चिम में

वैष्णव-पंथ के प्रसिद्ध साधु हुए और इनके अनुयायी आजकल भी प्रचुर संख्या में हैं। वल्लभस्वामी ने (१५२०) कृष्ण-भक्ति का विशेष प्रचार किया। हिन्दू-मुसलमानों में ऐक्य स्थापन करने के लिए कबीर ने (१३८०-१४२०) प्रयत्न किया। पहले के अनेक ग्रन्थों और सूत्रों पर इस समय में बड़े बड़े भाष्य बने। विशेषतः गोविन्द स्वामी, केशव स्वामी इत्यादि "स्वामी" नाम धारण करनेवाले व्यक्ति इस समय में भाष्यकार हुए।

प्राचीन काल में प्राकृत-भाषा में ग्रन्थ-रचना अधिक होती थी। यह परिपाटी अब बन्द होकर संस्कृत में ग्रन्थ-रचना की परिपाटी चल पड़ी। काव्य, नाटक, उपन्यास, साहित्य-ग्रन्थ इस समय सभी संस्कृत-भाषा में तैयार हुए। इस समय के देवालय और अन्य इमारतों को देखने से पता लगता है कि तत्कालीन शिल्पकला उन्नतावस्था में थी। ज्योतिष-शास्त्र की भी पूर्ति हुई। संस्कृत से बीजगणित का अनुवाद अरब लोगों ने आठवीं सदी में किया और उन्होंने ही उसका प्रचार भी यूरोप में किया। पंचतंत्र-कार विष्णु शर्मा, भट्टि, बाणभट्ट, दंडी, भारवि, सुबन्धु, भर्तृहरि इत्यादि संस्कृत के सुप्रसिद्ध कवि और ग्रन्थ-कार इसी काल में उदय हुए।

(४) विहङ्गमावलोकन—सरसरी निगाह से भारत के प्राचीन इतिहास को देखने से प्रतीत होता है कि ई० स० पू० ३२६ सिकन्दर के आक्रमण का समय निर्विवाद प्रसिद्ध है। तब ई० स० पू० ६४२ ही बनारस के शिशुनागराज का समय अपने प्राचीन इतिहास में पहला निश्चित समय मानना होगा। इसके पूर्व की घटनाओं का ऐतिहासिक निश्चय अब तक नहीं हो

देश की प्रजा को अपनी उन्नति करने में कोई अड़चन न होती थी। बड़े बड़े साम्राज्यों और सुधारों का उदय गंगा और यमुना आदि के प्रवाह-भाग में हुआ। सभी काल में व्यापार और धर्म प्रचार के हेतु विदेशों में भारत के यात्री स्थल और जल-मार्ग के द्वारा पूर्व-पश्चिम दोनों दिशाओं में ईरान, मिस्र, रोम और पूर्व के द्वीप-समूहों में बराबर आते-जाते थे। इस आने-जाने के योग से यहाँ से विद्या, कला, सम्पत्ति इत्यादि का प्रचार दूर दूर के देशों में हुआ। इससे विदेशियों की दृष्टि भारत पर गड़ गई। ग्रीक, ईरानी, हूण, अफ़ग़ान, मुग़ल इत्यादि अनेक विदेशी इस देश पर अनेक बार आक्रमण करके यहाँ अपनी थोड़ी-बहुत सत्ता जमाने में सफल हुए। लेकिन इस देश के लोगों की बुद्धिमत्ता और संस्कृति सुसम्पन्न और शुद्ध बनी हुई थी। इसी लिए ऐसे सभी विदेशियों के संसर्ग के योग से उन्होंने अपने जीवन को और भी अधिक विस्तृत और दृढ़ कर लिया। अपनी दृढ़ता के कारण उन्होंने विदेशियों पर अपनी छाप लगा दी। विदेशी हमले होने पर भारतीयों का अवश्य ही पराभव होता था, यह कहना यथार्थ नहीं है। क्योंकि वे हमले जीवित राष्ट्र के उत्साह को नहीं भंग कर सके, यह बात अवश्य ही ध्यान में रखने योग्य है। मौर्य-साम्राज्य, गुप्त-साम्राज्य, उत्तर-कालीन राजपूतों के रजवाड़ों इत्यादि के दीर्घ कालीन शासन में विद्या, स्वातंत्र्य और ऐश्वर्य का उपभोग भारतीय आर्यों ने स्वयं किया और दूसरों को कराया। ई० स० पू० ६०० से ई० स० ११९३ तक कोई १८ सौ वर्ष के दीर्घ कालीन स्वराज्य-काल में भारत ने स्वातंत्र्य और उन्नति का उपभोग किया। ऐसा समय इस पृथिवी पर किसी दूसरे राष्ट्र को कभी नहीं प्राप्त हुआ। दो सौ वर्ष के मुग़ल-साम्राज्य-काल तक में भारतीय समाज जीवित राष्ट्र का

...ा सुख भोगना था। मुग़लों के ह्रास-काल में मराठों ने हिन्दू-
...त्ता को पुनरुज्जीवित कर दिया। और इसकी पूर्ति होने
पहले ही नियमबद्ध, युद्धकलाप्रवीण, शासकों में प्रवीण
...ग्रेज़-जाति का सम्बन्ध भारत से हो गया और अंग्रेज़ों की
...र्वाधीन सत्ता इस देश में स्थापित हो गई। ऐसी ही इस देश
...तिहास की परम्परा चली आ रही है।

द्वितीय भाग

मुस्लिम-शासन-काल

पहला अध्याय

पठानों का शासन सन् ९९९-१५२५

१—मुसलमानों का उदय, मुहम्मद पैग़म्बर २—महमूद ग़ज़नवी
३—पठान-राजवंश, अलाउद्दीन खिल्जी ४—महम्मद व फ़िरोज़ तुगलक
५—तैमूरलंग का आक्रमण ६—पठान-शासन पर एक दृ
७—स्वभाव-भेद, अरब, तुर्क, मुग़ल और पठान ८—बहमनी राज्य

(१) मुसलमानों का उदय, मुहम्मद पैग़म्बर—भारत की जन-संख्या कुल ३१ करोड़ है। इसमें २१ करोड़ हिन्दु और सात करोड़ मुसलमान हैं। ई० स० १००० के पहले सिन्धु नदी के पूर्वी भूभाग में मुसलमान नहीं रहते थे। इनके धर्म संस्थापक मुहम्मद पैगम्बर का जन्म अरब में मक्का नामक स्थान में सन् ५७० में हुआ था। उस समय अरब लोग मूर्ति पूजक थे। इसी मुल्क [illegible] के [illegible] लोगों में नवीन धर्म का उपदेश, बड़े होने पर, मुहम्मद पैगम्बर ने करना शुरू किया उसे ऐसी इच्छा प्रेरणा हुई कि तुम लोगों में सत्य धर्म का प्रचार [illegible] धीरे धीरे उनके पथ का प्रचार होने लगा। यह देख कर

द्वितीय भाग

मुस्लिम-शासन-काल

पहला अध्याय

पठानों का शासन सन् ९९९-१५२५

१—मुसलमानों का उदय, मुहम्मद पैग़म्बर २—महमूद ग़ज़नवी
३—पठान-राजवंश, अलाउद्दीन खिल्जी ४—महम्मद व फ़िरोज़ तुग़लक़
५—तैमूरलंग का आक्रमण ६—पठान-शासन पर एक दृष्टि
७—स्वभाव-भेद, अरब, तुर्क, मुग़ल और पठान ८—बहमनी राज्य

(१) मुसलमानों का उदय, मुहम्मद पैग़म्बर—भारत की जन-संख्या कुल ३१ करोड़ है। इसमें २१ करोड़ हिन्दू और सात करोड़ मुसलमान हैं। ई० स० १००० के पहले सिन्धु-नदी के पूर्वी भू-भाग में मुसलमान नहीं रहते थे। इनके धर्म संस्थापक मुहम्मद पैग़म्बर का जन्म अरब में मक्का नामक स्थान में सन ५७० में हुआ था। उस समय अरब लोग मूर्त्ति पूजक थे। इसी मूर्त्ति पूजा के विरुद्ध लोगों में नवीन धर्म का उपदेश, बड़े होने पर, मुहम्मद पैग़म्बर ने करना शुरू किया। उसे ऐसी दर्शन प्रगट हुए कि 'तुम लोगों में सत्य धर्म का प्रसार करो'। धीरे धीरे इसके पथ का प्रचार होने लगा। यह देख कर

द्वितीय भाग

मुस्लिम-शासन-काल

पहला अध्याय

पठानों का शासन सन् ९९९-१५२५

१—मुसलमानों का उदय, मुहम्मद पैगम्बर २—महमूद ग़ज़नवी
३—पठान-राजवंश, अलाउद्दीन खिलजी ४—महम्मद व फ़िरोज़ तुग़लक़
५—तैमूरलंग का आक्रमण ६—पठान-शासन पर एक दृष्टि
७—स्वभाव-भेद, अरब, तुर्क, मुग़ल और पठान ८—बहमनी राज्य

(१) मुसलमानों का उदय. मुहम्मद पैग़म्बर—भारत की जन-संख्या कुल ३१ करोड़ है। इसमें २१ करोड़ हिन्दू और सात करोड़ मुसलमान हैं। ई० स० १००० के पहले सिन्धु-नदी के पूर्वी भू-भाग में मुसलमान नहीं रहते थे। इनके धर्म-संस्थापक मुहम्मद पैग़म्बर का जन्म अरब में मक्का नामक स्थान में सन् ५५० में हुआ था। उस समय अरब लोग मूर्त्ति-पूजक थे। इसी मूर्त्ति-पूजा के विरुद्ध लोगों में नवीन धर्म का उपदेश, बड़े होने पर, मुहम्मद पैगम्बर ने करना शुरू किया। उसे ऐसी दैवी प्रेरणा हुई कि 'तुम लोगों में सत्य धर्म का प्रसार करो'। धीरे धीरे उसके पंथ का प्रचार होने लगा। यह देख कर

लोग उन्हें सताने लगे। अतः सन् ६२२ में उन्हें मक्का छोड़ कर मदीना जाना पड़ा। इस पलायन-काल से मुसलमानों का हिजरी सन् शुरू होता है। शांति के दूत से दिये गये उपदेश को लोग नहीं मानते थे। यह देख कर उन्होंने शस्त्र के बल पर देश जीत कर वहाँ अपना धर्म और राज्य चलाने की इच्छा प्रकाशित कर ऐसा ही उद्योग करना शुरू किया। इस तरह अरब लोगों में नवीन जोश पैदा करके उन्होंने मक्के को अपने अधिकार में कर लिया। बड़ी बड़ी लड़ाइयों में मुहम्मद को विजय मिलने से पश्चिमी एशिया में उनके नवीन धर्म का प्रचार हुआ। मक्का ही इस धर्म का पवित्र क्षेत्र बना। मृत्यु के बाद राज्य और धर्म की व्यवस्था क्या होगी—इसका निश्चय करके यह प्रसिद्ध पुरुष सन् ६३२ की ८वीं जून को मरा। मुहम्मद ने इस्लाम के उपदेश ग्रन्थ को तैयार किया। इस ग्रन्थ का नाम कुरान है। यह ग्रन्थ अरबी-भाषा में लिखा हुआ है। मुहम्मद के बाद उनकी गद्दी पर जो अधिकारी बैठे उन्हें "खलीफा" की पदवी मिली। बाद को इस्लाम-धर्म का चारों ओर प्रचार करते हुए मुसलमान भारत में आये।

(२) महमूद गजनवी—अरब-सरदार मुहम्मद बिन कासिम ने सन् ७१२ में भारत में प्रवेश करके सिन्ध-प्रान्त जीत लिया था। दसवीं सदी में मुसलमानों ने अफगानिस्तान के गजनी-राज्य पर अधिकार कर लिया। इसी गजनी-राज्य के एक सुलतान के एक सुबुक्तगीन नाम का एक गुलाम था। इसने लगभग ९७७ ई० में अफगानिस्तान को जीत कर गजनी में अपना राज्य स्थापित किया। सन् ९९७ में इसकी मृत्यु हुई। इसके बाद इसका लड़का [illegible] सुलतान हुआ और [illegible]

द्वितीय भाग

मुस्लिम-शासन-काल

पहला अध्याय

पठानों का शासन सन् ९९९-१५२५

१—मुसलमानों का उदय, मुहम्मद पैग़म्बर २—महमूद ग़ज़नवी
३—पठान-राजवंश, अलाउद्दीन खिलजी ४—महम्मद व फ़िरोज़ तुग़लक़
५—तैमूरलंग का आक्रमण ६—पठान-शासन पर एक दृष्टि
७—स्वभाव-भेद, अरब, तुर्क, मुगल और पठान ८—बहमनी राज्य

(१) मुसलमानों का उदय, मुहम्मद पैग़म्बर—भारत की जन-संख्या कुल ३१ करोड़ है। इसमें २१ करोड़ हिन्दू और सात करोड़ मुसलमान हैं। ई० स० १००० के पहले सिन्धु नदी के पूर्वी भू-भाग में मुसलमान नहीं रहते थे। इनके धर्म-संस्थापक मुहम्मद पैग़म्बर का जन्म अरब में मक्का नामक स्थान में सन् ५५० में हुआ था। उस समय अरब लोग मूर्ति-पूजक थे। इसी मूर्ति-पूजा के विरुद्ध लोगों में नवीन धर्म का उपदेश, बड़े होने पर, मुहम्मद पैग़म्बर ने करना शुरू किया। उसे देवी दैवी प्रेरणा हुई कि 'तुम लोगों में सत्य धर्म का प्रसार करो'। धीरे धीरे उसके पंथ का प्रचार होने लगा। यह देख कर

द्वितीय भाग

मुस्लिम-शासन-काल

पहला अध्याय

पठानों का शासन सन् ९९९-१५२५

१—मुसलमानों का उदय, मुहम्मद पैग़म्बर २—महमूद ग़ज़नवी
३—पठान-राजवंश, अलाउद्दीन खिल्जी ४—महम्मद व फ़िरोज़ तुग़लक़
५—तैमूरलंग का आक्रमण ६—पठान-शासन पर एक दृष्टि
७—स्वभाव-भेद, अरब, तुर्क, मुग़ल और पठान ८—बहमनी राज्य

(१) मुसलमानों का उदय, मुहम्मद पैग़म्बर—भारत की जन-संख्या कुल ३१ करोड़ है। इसमें २१ करोड़ हिन्दू और सात करोड़ मुसलमान हैं। ई० स० १००० के पहले सिन्धु नदी के पूर्वी भू-भाग में मुसलमान नहीं रहते थे। इनके धर्म-संस्थापक मुहम्मद पैगम्बर का जन्म अरब में मक्का नामक स्थान में सन् ५७० में हुआ था। उस समय अरब लोग मूर्त्ति पूजक थे। इसी मूर्त्ति पूजा के विरुद्ध लोगों में नवीन धर्म का उपदेश, बड़े होने पर, मुहम्मद पैगम्बर ने करना शुरू किया। उस ऐसी दैवी प्रेरणा हुई कि 'तुम लोगों में सत्य धर्म का प्रसार करो'। धीरे धीरे उसके पंथ का प्रचार होने लगा। यह देख कर

दुर्गादास

लगा। उस समय अफ़गानिस्तान के पूर्वभाग गांधार-देश व सिन्धु के किनारे पंजाब-प्रान्त में राजा जयपाल शासन करता था। इसकी राजधानी पेशावर थी। सुबुक्तगीन ने जयपाल पर चढ़ाई करके उसके राज्य का कुछ भाग छीन लिया। सुबुक्तगीन का लड़का सुल्तान महमूद या महमूद ग़ज़नवी बड़ा पराक्रमी निकला। उसने सन् ९९९ से १०३० तक ग़ज़नी में राज्य कर भारत पर लगातार सत्रह चढ़ाइयाँ कीं। उस समय भारत में राजपूतों के अनेक छोटे छोटे राज्य थे, जिनमें परस्पर ऐक्य न था। महमूद बड़ा शूर और दृढ़ निश्चयी व्यक्ति होने के कारण राजपूत राजाओं को एक एक करके हरा दिया। यहाँ की अपार सम्पत्ति लूट कर उसने ग़ज़नी में एकत्र की। उस समय इस देश में हिन्दुओं के बड़े प्राचीन और धन-सम्पन्न अनेक मन्दिर थे। इनको विध्वस्त कर और अनेक लड़ाइयों को जीत कर उसने अगणित हिन्दुओं को मुसलमान बनाया। सन् १०२४ में उसने अपनी अन्तिम आक्रमण-यात्रा में दूर के काठियावाड़-प्रान्त पर हमला किया। काठियावाड़ के दक्षिण में समुद्रतट पर सोमनाथ का प्रसिद्ध मंदिर था। इसकी सम्पत्ति भी अपार थी। इससे इसका नाम दूर दूर तक फैला था। वहाँ की सम्पत्ति को लेने की आशा से महमूद पंजाब, राजपूताना, गुजरात इत्यादि प्रान्त जीतता हुआ डेढ़ सोमनाथ पर चढ़ आया। लड़ाई में आये हुए हिन्दुओं को हरा कर उसने मन्दिर पर अधिकार कर लिया। उसने अपने हाथ से उस मन्दिर की मूर्त्ति को तोड़ा, और सब सम्पत्ति लेकर सिंध प्रान्त पार कर वह अपनी राजधानी ग़ज़नी को लौट गया। इस लड़ाई में उसकी फ़ौज के बहुत आदमी मारे गये। इसके बाद महमूद फिर कभी भारत में नहीं आया। उसकी

पृथ्वीराज

कुतुबमीनार
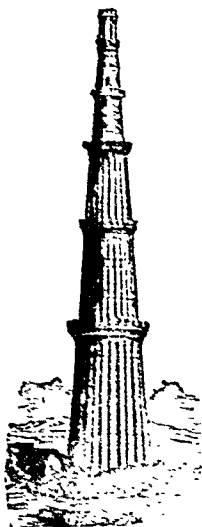
बलबन के सिक्के

के कारण उसके दरबारी उससे रुष्ट हो गये और उन्होंने विद्रोह किया। रज़िया ने उनका विद्रोह दबाने की चेष्टा की, परन्तु वह सन् १२४० में मार डाली गई।

बलबन—रज़िया के बाद दो बादशाह और हुए। परन्तु वे बड़े अयोग्य थे। सन् १२४६ में अलतमश का सब से छोटा लड़का नासिरुद्दीन गद्दी पर बैठा। उसकी बड़ी ही सरल प्रकृति थी। सच पूछो तो राज्य का सारा भार उसके वज़ीर ग़यासुद्दीन बलबन पर था। उसने २० वर्ष तक राज्य किया। सन् १२६६ में उसके मरने के बाद ग़यासुद्दीन बलबन ही गद्दी पर बैठा। वह बड़ा वीर था। विद्रोहियों को वह ख़ूब कठोर दण्ड देता था। उसने मुग़लों के आक्रमण रोकने के लिए पुराने क़िलों की मरम्मत की और नये क़िले बनवाये। वह विद्वानों का यथेष्ट सम्मान करता था। उसी के समय में फ़ारसी का प्रसिद्ध कवि अमीर ख़ुसरो हुआ। सन् १२८६ में उसकी मृत्यु हुई। उसके बाद उसका पोता कैकुबाद गद्दी पर बैठा। परन्तु अपनी अयोग्यता के कारण मारा गया।

दिल्ली की गद्दी पर अनेक पठान-वंशी सुल्तानों का अधिकार रहा और कालान्तर में अनेक सुल्तानों ने अपना राज्य सारे भारत में फैलाया। इन पठान-घरानों की नामावली नीचे दी जाती है।

१-ग़ज़नवी-वंश	९९९-११८६	२-गोरी वंश	११८६-१२०६
३-गुलाम-वंश	१२०६-१२८८	४-खिलजी वंश	१२९०-१३२०
५-तुग़लक़-वंश	१३२०-१४१४	६-सैयद-वंश	१४१४-१४५०
७-लोदी-वंश	१४५०-१५२६	८-[illegible]	[illegible]

वश में करने की बात सोची। उसने अपने नाती पीर मुहम्मद को भारत में पहले भेजा और बाद को वह स्वयं भारत पर चढ़ाई करने आया। जिस जिस स्थान से होकर वह आया उसको उसने जीता, गाँवों को जलाया, शहरों को जीत कर वहाँ के लोगों को मार-काटा। इसी तरह वह आगे बढ़ता गया और पानीपत होकर दिल्ली आ पहुँचा। उसके पास लड़ाई में पकड़े हुए इतने अधिक कैदी थे कि उनका सँभालना भी उसके लिए मुश्किल था। उसकी समझ में यह न आया कि इतने आदमियों का वह क्या करे। इसलिए १५ वर्ष से अधिक उमरवाले कैदियों को उसने कत्ल करवा दिया। उस समय महमूद तुगलक़ दिल्ली का सुलतान था। वह तैमूर के आने से पहले ही दिल्ली से गुजरात की ओर भाग गया। अतएव तैमूर स्वयं दिल्ली का बादशाह बन गया और शहर को लूटा-फूँका। उस समय दिल्ली के रहनेवाले घबरा कर इधर-उधर भागने लगे। तैमूर के सिपाहियों ने उन्हें भी मारा। शहर के गली-कूचे मुर्दों की लाशों से भर गये। इस तरह १५ दिनों तक तैमूर ने दिल्ली में लूट मार की और अकूत धन लेकर वह वहाँ से निकला। रास्ते में उसने दिल्ली की तरह मेरठ में भी भयङ्कर लूट-मार की। जाते समय भारत के अगणित कारीगरों को वह अपने साथ समरकन्द ले गया। पञ्जाब का शासन उसने ख़िज़िरख़ाँ नामक अपने सरदार को दिया। यही बाद को सैयद घराने का संस्थापक बना।

ईश्वरीय प्रकोप से अनेक प्रकार के अनर्थ मनुष्य-जाति पर होते आये हैं, जिनमें उसका संहार हुआ है। उन्हीं में यदि तैमूरलंग का यह आक्रमण भी गिना जाय तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। तैमूर की सन् १४०५ में मृत्यु हुई। ख़िज़रख़ाँ का एक

राजदूत तैमूर के दरबार में आया था। उसका लिखा वृत्तान्त बड़ा मनोरञ्जक है। तैमूर के लम्बे-चौड़े राज्य में बड़ा कड़ा प्रबन्ध था और उसकी धाक सब जगह एक सी जमी हुई थी। उसके दरबार के वैभव को देख कर स्पेनी राजदूत अचम्भे में पड़ गया था। उसकी बेगम के साथ तीन सौ दासियाँ सदा बनी रहती थीं। वह चाहे कितना ही क्रूर रहा हो, किन्तु वह मूर्ख अथवा केवल लड़ाकू ही नहीं था। उसके बनाये नियम, उसकी राज्य-व्यवस्था, उसके समय की विद्या और कला का उस समय योरप में बड़ा आदर था। उसकी कड़ी राजनीति उस समय के ही अनुसार थी। उसने छोटी-बड़ी सब मिला कर कुल चालीस लड़ाइयाँ भिन्न भिन्न राज्यों में लड़ी थीं। जीते हुए राज्यों से कारीगरों को ले आकर उसने अपने राज्य में उनके द्वारा नवीन उद्योग धन्धे चलाये थे।

तैमूर के भारत से चले जाने के बाद यहाँ मुसलमानी राज्य की अवस्था बहुत अधिक गिर गई। अनेक सूबे स्वतन्त्र हो गये। महमूद तुगलक दिल्ली लौट आया और वहीं रहने लगा। लेकिन उसका शासन सिर्फ दिल्ली और दिल्ली से थोड़ी दूर बाहर तक चलता था। वह सन् १४१२ में मर गया। उसके बाद खिजिरखाँ सैयद ने १४१४ में दिल्ली के राज्य को अपने अधीन कर उसे थोड़ा बहुत मजबूत बनाया। लेकिन क़रीब सौ वर्ष तक यह कमज़ोरी दूर न हुई। आगे चल कर लोदी-वंश का सुलतान इब्राहीमख़ाँ दिल्ली पर राज्य करने लगा। उस समय अफ़गानिस्तान में काबुल पर तैमूर के वंशज बाबर ने अपना राज्य जमाया। उसको पञ्जाब के सूबेदार दौलतखाँ लोदी ने भारत पर

सत्ता स्थापित की और धीरे धीरे अपना भी सुधार उन्होंने किया। इसका परिणाम बाद को यह हुआ कि योरपीय लोगों का अन्य लोगों पर प्रभुत्व स्थापित हुआ। लेकिन भारत में पठानों के शासन ने विद्या-कला को शीघ्र ही चौपट कर दिया, जिससे यह देश उत्तरोत्तर अज्ञानान्धकार में डूबता गया। सारांश यह कि योरपीय लोगों की उन्नति और हिन्दुओं की अवनति एक साथ शुरू हुई और पश्चिमी राष्ट्रों ने अपनी ज्ञान-शक्ति के बल पर अपनी सत्ता सारी पृथिवी पर जमा ली।

(७) स्वभाव-भेद—अरब, तुर्क, मुग़ल और पठान—पठान-वंश के शासन में और आगे चलकर मुग़ल-बादशाही के समय विदेश से ईरानी, तुर्क, मुग़ल इत्यादि लोगों का प्रवेश इस देश में बहुत हुआ। उनकी संख्या अधिक न थी, तथापि आजकल की मुस्लिम संख्या यहाँ के भारतीय लोगों की स्वेच्छा से तथा उन्हें विवश करके धर्मपरिवर्तन करने के कारण अधिक बढ़ गई है। सब से पहले के मुसलमान अरब लोग हैं। उनकी विद्या और संस्कृति उच्च वर्ग की थी और उनका स्वरूप भी आकर्षक था। इन अरब लोगों ने मध्य-एशिया तक के राज्य जीत लिये और वहाँ के लोगों को मुसलमान बना लिया। तब से उन लोगों में ईरानी, तुर्क, अफ़ग़ान और पठान इत्यादि का भेद उत्पन्न हुआ। इनमें तुर्कों का फैलाव बाद को पश्चिमी एशिया और पूर्व-योरप में अधिक हुआ। उनका कड़ुआ और विध्वंसक स्वभाव वहाँ तथा अन्यत्र प्रसिद्ध है। सातवीं सदी में अरब लोगों ने ईरान जीत लिया। उस समय वहाँ अनेक लोग इस्लाम धर्म में आ गये। केवल कुछ थोड़े स्वधर्म प्रेमी ईरानी धर्म-रक्षा के लिए पश्चिम भारत में नवसारी के आस पास आकर बस गये। यही आज कल के पारसी हैं यह थोड़ी सी जाति आज भी अपनी नक़ नियती

हुमायूँ

बाबर

सिन्ध के दाहिर, पेशावर के जयपाल, कन्नौज के जयचंद इत्यादि सैकड़ों घरानों के वंशज मुसलमानों के हमलों के सामने झुक गये और बाद को राजपूताना तथा अन्य स्थानों में जा बसे। उदयपुर के सिसौदिया, जोधपुर के राठौड़, जयपुर के कच्छवाह, इसी प्रकार बुन्देले, हाड़ा, यादव, नैपाल की तराई के गोरखे, इत्यादि अनेक नामों से राजपूत लोग प्रसिद्ध हैं। बाबर ने जिस समय दिल्ली में मुग़ल-बादशाही की नींव डाली उस समय राजपूतों ने मेवाड़ के राणा साँगा को अपना सरदार बना कर बाबर का अन्तिम भयङ्कर सामना किया। किन्तु इस लड़ाई में राजपूतों को विजय न मिल सकी।

जिस समय बाबर भारत में आया उस समय मेवाड़ का राणा साँगा राजपूतों का अगुआ था। वह शूर, पराक्रमी व चतुर योद्धा था। वह भी बाबर के समान महत्त्वाकांक्षी और बड़ा परिश्रमी था। वह दिल्ली के तख्त को लेकर हिन्दू-साम्राज्य स्थापित करने के लिए प्रयत्न कर रहा था। इसी लिए उसने बाबर के विरुद्ध इब्राहीम लोदी को मदद न दी। वह सोचता था कि तैमूरलंग के समान बाबर भी आक्रमण करके काबुल को वापस चला जायगा। लेकिन उसके देखते ही देखते बाबर ने दिल्ली में ही अपना झंडा सदा के लिए गाड़ दिया। यह देख राणा साँगा ने सब राजपूतों को एकत्र कर बाबर पर हमला किया। आगरे के समीप दस कोस पर सीकरी नाम का एक स्थान है। वहीं राजपूतों और बाबर की लड़ाई हुई। पहले बाबर को अपने जीतने की आशा बिलकुल न रह गई थी। उसकी फ़ौजों के सिपाही लड़ाई के मैदान से राजपूतों को पीठ दिखा कर भागने लगे। अन्त में बाबर ने ईश्वर की दया-प्रार्थना करके उसे प्रसन्न

करने के लिए शराब के बरतन फोड़ डाले और फिर कभी शराब न पीने की शपथ की। उसने अपने सिपाहियों से कहा कि "अब अपने प्राण तो बच नहीं सकते। अतः पराक्रम दिखला कर मरना अच्छा है"। कुछ दिनों तक दोनों पक्षों की फ़ौजें पड़ाव डाले एक दूसरे के सामने अड़ी रहीं। ऐसे मौक़े पर यदि राणा साँगा ने कहीं मुग़लों की फ़ौजों पर एकदम हमला कर दिया होता तो वह अवश्य ही जीतता; लेकिन ऐसा न करने से बाबर को तैयारी करने का मौक़ा मिल गया। अन्त में सन् १५२८ के मार्च महीने की १६ वीं तारीख़ को अंतिम लड़ाई हुई। लड़ाई के शुरु होते ही राणा सांगा का एक दरबारी रूठ कर बाबर से जा मिला। लड़ाई अभी शुरु ही हुई थी कि राणा साँगा घायल हुआ और उसके अनेक साथी मारे गये। इससे राजपूतों के पैर उखड़ गये, और बाबर की जीत हुई। बाबर ने राजपूतों के सिर काट कर एक ढेर तैयार किया और "ग़ाज़ी" (अर्थात् क़ाफ़िरों को मारनेवाला) की पदवी स्वयं धारण की। यही पदवी बाद को मुग़लों-द्वारा दिये गये सनद-पत्रों में और उनके चलाये गये सिक्कों में नियमित रूप से अंकित की जाती थी। सीकरी की लड़ाई के बाद ही बाबर ने फ़ौरन बुन्देलखंड में चंदेरी का क़िला ले लिया और फिर बिहार-प्रान्त को अपने राज्य में मिला लिया। राज्य में शान्ति स्थापित करने के पूर्व ही बाबर अचानक बीमार पड़ा और आगरे में सन् १५३० में मर गया।

बाबर ने भारत में केवल पाँच ही वर्ष शासन किया, तथापि शासकों की गिनती में वह सब से बढ़ कर गिना जाता है। बचपन से ही उसने अनेक सङ्कटों का सामना किया था। वह

विद्वान और भावुक था। उसने अपना चरित तुर्की-भाषा में लिख रक्खा था। इस चरित में अपनी मृत्यु के एक वर्ष पहले तक का हाल उसने दिया है। बाबर की माँ बातचीत में बड़ी चतुर और काम करने में बड़ी चालाक स्त्री थी। बड़े बड़े गुणी और विद्वान, चित्रकार और कवि इत्यादि से बाबर स्नेह करता था। जैसा वह शूर था, वैसा ही चतुर सेनानायक भी था। उसके जोड़ का पुरुष हिन्दुओं में कोई न था, इसी से राजपूतों की पराजय हुई। बाबर की फ़ौज भी फ़ौजी क़वायद सीखी हुई थी। लड़ाई में सामान्य सिपाहियों से ही सब प्रकार के शत्रु पक्ष के हाल उसे मिल जाते थे। उसे शराब पीने का बड़ा शौक़ था। लेकिन सीकरी की लड़ाई के बाद उसने शराब बिलकुल नहीं पी। प्रत्यक्ष अनुभवों से उसे शिक्षा मिली थी। इसी से उसमें बुद्धिबल भी अधिक था। सृष्टि-सौन्दर्य को देख वह बड़ा ख़ुश होता था। इसी से वह कविता भी अच्छी कर सकता था। बातचीत में चतुरता, विद्वत्ता, लग कर काम करने की आदत, ऊँचा पद पाने की इच्छा, उदारता इत्यादि गुण उसमें मौजूद थे। इसी से वह आदर का पात्र बन जाता था। उसके राज्य का विस्तार पश्चिम में मध्य-एशिया की अमू दरिया से लेकर पूर्व में आसाम तक था। भारत में तोपों का प्रयोग पहले पहल बाबर ने ही किया था।

(३) हुमायूँ (सन् १५३०-४० और १५५५-५६)—सन् १५३० के दिसम्बर मास में हुमायूँ को २३ वर्ष का छोड़ कर बाबर मरा। उसके मरते ही हुमायूँ राज्य का मालिक बना। लेकिन वह राज्य निष्कंटक न था। पिता के साथ रह कर मध्य-एशिया से लगा कर बंगाल तक की लड़ाइयों में तथा राज्य के शासन-प्रबन्ध में उसने काफ़ी अनुभव प्राप्त

कर लिया था। बाबर का उस पर पूरा पूरा प्रेम था। बाबर लिखता है कि "वह (हुमायूँ) मेरे पास आया कि मेरा अन्तःकरण गुलाब की कली के समान खिल उठता और आनन्द के झोंके लेने लगता और उसके मीठे शब्द सुन कर चित्त में बड़ा ही सन्तोष होता था।" हुमायूँ उदारचित्त और स्नेही व्यक्ति था। समय आ पड़ने पर कष्ट सहने से नहीं हिचकता था। लेकिन उसमें फुर्ती और दृढ़ता न होने के कारण उस गड़बड़ के समय में उसका निर्वाह न हो पाया। हुमायूँ का शाब्दिक अर्थ "भाग्यवान्" है, किन्तु इसके समान अभागा नरेश कदाचित् ही दूसरा हुआ हो। बाबर ने भारत में जिस राज्य पर अपना अधिकार किया था वह बिलकुल छोटा था। बंगाल, गुजरात, राजपूताना इत्यादि अन्य प्रदेश पूर्णरीति से अधीन न किये जा सके थे। ऐसी अवस्था में हुमायूँ के भाई भी उसके विरुद्ध उठ खड़े हुए। पिता की आज्ञा थी कि "भाइयों को दुःख न देना।" इस आज्ञा के पालन करने में उसने अपनी हार तक स्वीकार कर ली थी। किन्तु सभी भाइयों का अंत किये बिना उसे शान्ति न मिली। उसके भाई कामराँ ने काबुल और पञ्जाब को स्वतंत्र कर उस ओर से उसे विदेशी मुग़लों की सहायता मिलनी रोक दी। उसके हिंदाल व मिर्ज़ा* असकरी दो भाई और थे। ये दोनों छोटे भाई भोले थे। इन्होंने भी बिना समझे-बूझे विद्रोहियों का साथ दिया। ऐसे ही जाल में हुमायूँ फँस गया था। लेकिन एक साथ सब शत्रुओं के साथ

* मिर्ज़ा फ़ारसी शब्द है। इसका प्रयोग राजघराने में राजकुमार के संबोधन के लिए होता है। इसी के समान अर्थ वाला अरबी-भाषा "अमीर" है। खाँ तुर्की भाषा का शब्द है। खाँ से इसका पदवीसूचक बोध होता है।

न लड़कर एक एक का उच्छेद करने की नीति से हुमायूँ ने काम न लिया।

पश्चिमोत्तरी सीमा पर कामरां, पूर्व में लोदी सुलतान व शेरखाँ पठान और दक्षिण में गुजरात का सुलतान बहादुरशाह हुमायूँ से वैर कर रहे थे। इनके बीच में उन्हीं के समान अन्य विद्रोही भी खड़े थे। पहले पहल लखनऊ के पास सन् १५३१ में हुमायूँ ने लोदियों पर हमला करके उनको करारी हार दी। किन्तु उधर उसका साथी शेरखाँ बिहार में विद्रोही हो गया था। उसका बिलकुल नाश तो हुमायूँ ने किया नहीं, बल्कि हाथ में आया चुनार का किला शेरखाँ को दे दिया। यह शेरखाँ बाबर के समय में बिहार में एक छोटा सा अधिकारी था। वही आगे चल कर हुमायूँ को हटा कर कुछ दिनों के लिए दिल्ली का बादशाह बन बैठा। इस शत्रु के हाथ में दिल्ली के मार्ग की चाबी अर्थात् चुनार देकर हुमायूँ पूर्व से वापस लौट आया और अन्त में सन् १५३५ में गुजरात के बहादुरशाह पर उसने चढ़ाई की। उस समय बहादुरशाह मालवा जीत कर चित्तौड़ गढ़ पर घेरा डाले बैठा था। इसी मौके पर उसको उखाड़ देना सहज था। परन्तु ऐसा करने में उसने सोचा कि परधर्मी हिन्दुओं को अपना बल बढ़ाने का मौका मिल जायगा। ऐसी अवस्था में अपना धर्म डूबेगा। यह सोच कर मैं बहादुरशाह और हिन्दुओं की लड़ाई के अन्त होने तक चुप बैठा रहा। बाद को बहादुरशाह ने चित्तौड़ जीत लिया। अब हुमायूँ ने उसका सामना करके उसे भगा दिया। [illegible] के साथ उसका पीछा करके हुमायूँ ने अहमदाबाद, चम्पानेर, [illegible] [illegible] [illegible] को ले लिया और [illegible] में बहुत सा धन भी [illegible] [illegible] [illegible] के लिए थे।

लेते समय उसने इतना साहस दिखाया कि दीवाल पर कीलें ठोंक कर जो लोग ऊपर चढ़े उनमें स्वयं हुमायूँ ४१ वाँ व्यक्ति था। इतना कर के भी गुजरात का प्रवन्ध पूरा न कर अहमदाबाद में अपने भाई मिर्ज़ा अस्करी को बैठा कर स्वयं मालवे में आया और वहाँ उत्सवों में मग्न हो गया। अस्करी ने भी इधर ऐसी चैन की वंसी बजाई कि हुमायूँ के पीठ फेरते ही बहादुरशाह ने वापस आकर गुजरात ले लिया और हुमायूँ के आगरा वापस पहुँचते न पहुँचते मालवे पर भी उसने अपना अधिकार फिर जमा लिया। उसका प्रवन्ध तत्काल न कर लगभग दो वर्ष व्यर्थ गँवा दिये और विहार में शेरख़ाँ को प्रवल होता देख बहादुरशाह की ओर कुछ भी ध्यान न देकर वह सन् १५३७ के जुलाई मास में शेरख़ाँ पर चढ़ दौड़ा। उस समय शेरख़ाँ बङ्गाल की राजधानी "गौड़" पर अपना अधिकार कर चुका था। चुनार के क़िले को अपने अधीन कर हुमायूँ बड़ी हड़बड़ी के साथ बङ्गाल में जा पहुँचा। लेकिन शेरख़ाँ ने उसे पूरा धोखा दिया। उसने दूसरी राह से लौटकर राजमहल की पहाड़ियों को पार करके चुनार के क़िले को हुमायूँ के आदमियों से छीन लिया और इस तरह हुमायूँ के लौटने का रास्ता उसने बिलकुल बन्द कर दिया। उस समय हुमायूँ ने अपने बचाव का कोई उद्योग न कर ६ मास निश्चिन्त होकर काटे। इसके बाद लौटते समय उसने देखा कि शेरख़ाँ ने कन्नौज तक का देश अपने अधीन कर लिया है। अतः हुमायूँ ने बक्सर के पास शेरख़ाँ से लड़ाई लड़ी। इस लड़ाई में अपनी हार होती देख हुमायूँ गङ्गा में कूद पड़ा और एक भिश्ती की सहायता से वह गङ्गा-पार पहुँचा और ऐसी दुःख की अवस्था में अकेला ही

में आया। वहाँ हिन्दाल और अस्करी ने कोई सहायता न दी। बाद को शेरशाह ने उस पर चढ़ाई की। १७ मई सन् १५४० को क़न्नौज की लड़ाई में हुमायूँ को हरा कर भगा दिया और दिल्ली का तख़्त स्वयं प्राप्त किया।

हुमायूँ पहले लाहौर गया। वहाँ कामराँ ने उसे ठहरने न दिया। अतः वह सिन्ध प्रान्त की ओर जाने लगा। राह में हिन्दाल के पास वह कुछ दिनों रुका। वहाँ हिन्दाल के गुरु शेख़-अली अकबर जामी की लड़की हमीदा रहती थी। वह बड़ी रूपवती थी। इसलिये उसने उसके साथ विवाह कर लिया (१५४१ ई०)। बाद को हिन्दाल से उसे कोई मदद न मिली। अतः वह राह में बड़ी बड़ी मुसीबतों को झेलता हुआ अमरकोट पहुँचा। वहीं हमीदा बेगम की कोख से एक पुत्र हुआ (१५४२ ई०)। यही आगे चलकर अकबर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सिन्ध-प्रान्त में कोई सहारा न मिलने के कारण हुमायूँ कन्धार की ओर गया। वहाँ उसका भाई मिर्ज़ा अस्करी कामराँ का पक्ष लेकर उसका विरोध करने लगा। अतः राह में ही अकबर को छोड़ कर हुमायूँ ईरान के शाह के पास मदद माँगने को चला गया। कामराँ ने अकबर को पकड़ कर काबुल में क़ैद कर लिया। ईरान का बादशाह तहमास्प शियापंथी* मुसलमान था। बिना शिया बने वह मदद देने को राज़ी न हुआ।

* मुहम्मद पैग़म्बर के बाद तीन ख़लीफ़ा उनकी गद्दी पर बैठे। वे पैग़म्बर के वंशज न थे, बल्कि धर्मसभा-द्वारा चुने गये थे। चौथा ख़लीफ़ा अली मुहम्मद पैग़म्बर का दामाद था। उसके वंशजों को ही ख़लीफ़ा मानने-वाले शिया-पंथी मुसलमान कहलाते। वे लोग बीच के तीन ख़लीफ़ाओं को नहीं मानते। परन्तु सुन्नी-पंथ के मुसलमान सभी ख़लीफ़ाओं को मानते हैं। चाहे जिस पंथ का मुसलमान क्यों न हो उसके सामने पैग़-

ने भी तीन बार हुमायूँ से विद्रोह किया, इसलिए हुमायूँ ने उसकी आँखें निकलवा लीं। इसके कुछ वर्ष बाद मक्के जाते समय कामराँ मर गया (सन् १५५७)। मिर्ज़ा अस्करी को हुमायूँ ने देश निकाले का दण्ड दिया। वह भी मक्के जाते समय मर गया (१५५८)। हुमायूँ ने कामराँ को क़ैद कर के काबुल में अपना शासन शुरू किया। बाद को भारत में विद्रोह फैलने के समाचार सुन हुमायूँ ने सन् १५५५ ई० में दिल्ली पर चढ़ाई की और अपना खोया हुआ राज्य वापस लौटा लिया।

(४) सूरवंश (सन् १५४०-५५), शेरशाह (१५४०-१५४५)

हुमायूँ को हरा कर शेरशाह ने दिल्ली में प्रवेश किया। यह सूरवंशी पठान था। अतः यह और इसके बाद के इसी वंश के अन्य बादशाह सूरवंशी कहे जाते हैं। यह पठानी शासन केवल १० वर्ष तक रहा। शेरशाह पराक्रमी सिपाही और प्रवीण शासक था। फ़ौजी और राज्य करने के काम में दोनों में ही वह सब का अगुआ था। भिन्न भिन्न स्थानों के राजपूत राजे उस समय भी स्वतंत्र थे और अपने स्वातंत्र्य की रक्षा के लिए प्रयत्न कर रहे थे। उन्होंने उस समय तक भी मुसलमानों से हार न मानी थी। भूपाल के पास रायसीन नामक स्थान है। यहाँ के ठकुर प्रतापमल ने ६ मास तक बड़े पराक्रम के साथ शेरशाह का सामना किया। उसके वृत्तान्त को पढ़ कर चित्त चकित हो उठता है। मारवाड़, चित्तौड़, रणथम्भौर इत्यादि सभी स्थानों में शेरशाह को ऐसी ही कठिन लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं। लेकिन सन् १५४५ में कालिंजर क़िले पर क़ब्ज़ा करने में एक सुरंग के फट पड़ने से वह मर गया। उसने पाँच वर्ष तक राज्य किया। उसका अधिकांश समय लड़ाई में बीता। इतने पर भी उसने प्रजा के कल्याण

का प्रधान हेमू, पठानों की नौकरी में रहने से, हिन्दू-पद पादशाही का बड़ा पक्षपाती था। उसने विक्रमाजित नाम रखकर फ़ौज को इकट्ठा किया और तोपखाना जमाया। अकबर की धाक जमने से पहले ही उसने उसको हरा कर आगरे पर अपना अधिकार कर लिया। तब तो अकबर भी पंजाब की ओर से उसका सामना करने को आया। दोनों की मुठभेड़ ता० ५-११-१५५६ को पानीपत के मैदान में हुई। बड़ी घमासान लड़ाई हुई। हाथी पर बैठकर सब से आगे हेमू लड़ने लगा। इतने में शत्रु का एक तीर उसकी आँख में आ लगा। इसलिए वह गिर पड़ा। इसी समय बहरामख़ाँ ने उसका सिर काट लिया। यह पानीपत की दूसरी लड़ाई है। इस विजय से अकबर की धाक जम गई। बाद में बैराम और अकबर में परस्पर अनबन हो गई। अकबर का स्वभाव नरम था, लेकिन बैरामख़ाँ का स्वभाव बड़ा कड़ा था। अकबर जैसे जैसे बड़ा होता गया, तैसे तैसे उसको अधिक अधिकार बैरामख़ाँ ने न दिये। इसलिए अकबर ने बैरामख़ाँ को दूर कर स्वयं सब अधिकार उससे छीन लिये। इससे बैराम ख़ाँ नाराज़ हुआ और उसने अकबर के विरुद्ध विद्रोह खड़ा किया। लेकिन अकबर की फ़ौज ने उसको पराजय करके अकबर के सामने ला खड़ा किया। अकबर अपनी उदारता से विवश होकर उसे कुछ काम देता, लेकिन बैरामख़ाँ ने मक्का जाने की इच्छा प्रकट की। अकबर ने उसे मक्का जाने की आज्ञा दे दी। जिस समय वह मक्का जाने के लिये गुजरात पहुँचा, वहाँ उसको किसी ने मार डाला (सन् १५६१)। बैरामख़ाँ के लड़के को अकबर ने अपना बड़ा सरदार बनाया। इसी प्रकार आदमख़ाँ इत्यादि अनेक सरदारों के विद्रोहों को

सम्राट् अकबर

का प्रधान हेमू, पठानों की नौकरी में रहने से, हिन्दू-पद पादशाही का बड़ा पक्षपाती था। उसने विक्रमाजित नाम रखकर फ़ौज को इकट्ठा किया और तोपख़ाना जमाया। अकबर की धाक जमने से पहले ही उसने उसको हरा कर आगरे पर अपना अधिकार कर लिया। तब तो अकबर भी पंजाब की ओर से उसका सामना करने को आया। दोनों की मुठभेड़ ता० ५-११-१५५६ को पानीपत के मैदान में हुई। बड़ी घमासान लड़ाई हुई। हाथी पर बैठकर सब से आगे हेमू लड़ने लगा। इतने में शत्रु का एक तीर उसकी आँख में आ लगा। इसलिए वह गिर पड़ा। इसी समय बैरामख़ाँ ने उसका सिर काट लिया। यह पानीपत की दूसरी लड़ाई है। इस विजय से अकबर की धाक जम गई। बाद में बैराम और अकबर में परस्पर अनबन हो गई। अकबर का स्वभाव नरम था, लेकिन बैरामख़ाँ का स्वभाव बड़ा कड़ा था। अकबर जैसे जैसे बड़ा होता गया, वैसे वैसे उसको अधिक अधिकार बैरामख़ाँ ने न दिये। इसलिए अकबर ने बैरामख़ाँ को दूर कर स्वयं सब अधिकार उससे छीन लिये। इससे बैरामख़ाँ नाराज़ हुआ और उसने अकबर के विरुद्ध विद्रोह खड़ा किया। लेकिन अकबर की फ़ौज ने उसको पकड़ कर अकबर के सामने ला खड़ा किया। अकबर अपनी उदारता से विवश होकर उसे कुछ काम देता, लेकिन बैरामख़ाँ ने मक्का जाने की इच्छा प्रकट की। अकबर ने उसे मक्का जाने की आज्ञा दे दी। जिस समय वह मक्का जाने के लिये गुजरात पहुँचा, वहाँ उसको किसी ने मार डाला (सन् १५६१)। बैरामख़ाँ के लड़के को अकबर ने अपना बड़ा सरदार बनाया। इस प्रकार बैरामख़ाँ सरीखे अनेक सरदारों के विद्रोहों को

सम्राट् अकबर

का प्रधान हेमू, पठानों की नौकरी में रहने से, हिन्दू-पद पादशाही का बड़ा पक्षपाती था। उसने विक्रमाजित नाम रखकर फ़ौज को इकट्ठा किया और तोपख़ाना जमाया। अकबर की धाक जमने से पहले ही उसने उसको हरा कर आगरे पर अपना अधिकार कर लिया। तब तो अकबर भी पंजाब की ओर से उसका सामना करने को आया। दोनों की मुठभेड़ ता० ५-११-१५५६ को पानीपत के मैदान में हुई। बड़ी घमासान लड़ाई हुई। हाथी पर बैठकर सब से आगे हेमू लड़ने लगा। इतने में शत्रु का एक तीर उसकी आँख में जा लगा। इसलिए वह गिर पड़ा। इसी समय बहरामख़ाँ ने उसका सिर काट लिया। यह पानीपत की दूसरी लड़ाई है। इस विजय से अकबर की धाक जम गई। बाद में बैराम और अकबर में परस्पर अनबन हो गई। अकबर का स्वभाव नरम था, लेकिन बैरामख़ाँ का स्वभाव बड़ा कड़ा था। अकबर जैसे जैसे बड़ा होता गया, वैसे वैसे उसको अधिक अधिकार बैरामख़ाँ से न दिये। इसलिए अकबर ने बैरामख़ाँ को दूर कर स्वयं सब अधिकार उससे छीन लिये। इससे बैराम ख़ाँ नाराज़ हुआ और उसने अकबर के विरुद्ध विद्रोह खड़ा किया। लेकिन अकबर की फ़ौज ने उसको परास्त करके अकबर के सामने ला खड़ा किया। अकबर अपनी उदारता से विवश होकर उसे कुछ काम देता, लेकिन बैरामख़ाँ ने मक्का जाने की इच्छा प्रकट की। अकबर ने उसे मक्का जाने की आज्ञा दे दी। जिस समय वह मक्का जाने के लिये गुजरात पहुँचा, वहाँ उसको किसी ने मार डाला (सन १५६१)। बैरामख़ाँ के लड़के को अकबर ने अपना बड़ा सरदार बनाया। इसी प्रकार आसफ़ख़ाँ इत्यादि अनेक सरदारों के विद्रोहों को

सम्राट अकबर

का प्रधान हेमू, पठानों की नौकरी में रहने से, हिन्दू-पद पादशाही का बड़ा पक्षपाती था। उसने विक्रमाजित नाम रखकर फ़ौज को इकट्ठा किया और तोपख़ाना जमाया। अकबर की धाक जमने से पहले ही उसने उसको हरा कर आगरे पर अपना अधिकार कर लिया। तब तो अकबर भी पंजाब की ओर से उसका सामना करने को आया। दोनों की मुठभेड़ ता० ५-११-१५५६ को पानीपत के मैदान में हुई। बड़ी घमासान लड़ाई हुई। हाथी पर बैठकर सब से आगे हेमू लड़ने लगा। इतने में शत्रु का एक तीर उसकी आँख में जा लगा। इसलिए वह गिर पड़ा। इसी समय बहरामख़ाँ ने उसका सिर काट लिया। यह पानीपत की दूसरी लड़ाई है। इस विजय से अकबर की धाक जम गई। बाद में बैराम और अकबर में परस्पर अनबन हो गई। अकबर का स्वभाव नरम था, लेकिन बैरामख़ाँ का स्वभाव बड़ा कड़ा था। अकबर जैसे जैसे बड़ा होता गया, तैसे तैसे उसको अधिक अधिकार बैरामख़ाँ ने न दिये। इसलिए अकबर ने बैरामख़ाँ को दूर कर स्वयं सब अधिकार उससे छीन लिये। इससे बैराम ख़ाँ नाराज़ हुआ और उसने अकबर के विरुद्ध विद्रोह खड़ा किया। लेकिन अकबर की फ़ौज ने उसको परास्त करके अकबर के सामने ला खड़ा किया। अकबर अपनी उदारता से विवश होकर उसे कुछ काम देता, लेकिन बैरामख़ाँ ने मक्का जाने की इच्छा प्रकट की। अकबर ने उसे मक्का जाने की आज्ञा दे दी। जिस समय वह मक्का जाने के लिये सूरत पहुँचा, वहाँ उसको किसी ने मार डाला (सन् १५६१)। बैरामख़ाँ के लड़के को अकबर ने अपना बड़ा सरदार बनाया। इसी प्रकार आदमख़ाँ इत्यादि अनेक सरदारों के विद्रोहों को

सम्राट् अकबर

से कुछ सत्य न देख कर अकबर ने उन्हें अपने वश में करने का एक उपाय यह किया कि उनके घराने में अपना वैवाहिक संबन्ध जोड़ कर उनको अपना बना लिया। शुरू में सन् १५६१ में वह जयपुर गया। वहाँ के राजा भारामल ने अपनी लड़की अकबर को ब्याह दी। भारामल के लड़के भगवानदास को अकबर ने अपनी फौज में बड़ा सरदार बनाया। मारवाड़ का राजा मालदेव भी अकबर की शरण में आ गया। उसकी लड़की जोधबाई के साथ भी अकबर ने विवाह किया। उसी की कोख से सलीम पैदा हुआ। जयपुर के भगवानदास की लड़की मानबाई का ब्याह सलीम के साथ कर दिया। लेकिन उदयपुर के राजा ने मुसलमानों के साथ ऐसा कोई सम्बन्ध न जोड़ा।

(२) गुजरात—सन् १५७२-७३ में अकबर ने गुजरात पर चढ़ाई करके अनेक लड़ाइयाँ जीतीं, और अहमदाबाद शहर पर अधिकार करके वहाँ अपना सूबेदार नियत किया। (३) बंगाल में दाऊदखाँ स्वतंत्र शासक बन रहा था। तब अकबर की फौजों ने उस को मार डाला और बंगाल, बिहार व उड़ीसा पर अकबर का शासन शुरू किया। यह कार्य राजा टोडरमल ने किया था। उसके बाद कुछ दिनों में राजा मानसिंह ने बंगाल का शासन सुव्यवस्थित कर दिया। इसके बाद कुछ दिनों तक कोई लड़ाई न हुई। इस बीच में अकबर ने राज्य के भीतरी प्रबन्ध को सुधारा, और आगरा व फतहपुर सीकरी में सुन्दर इमारतें बनवाईं। (४) काबुल—सन् १५८५ में अकबर ने काबुल पर [illegible] और वहाँ का शासक [illegible]
[illegible]

काबुल

काश्मीर

लाहौर

देहली

आगरा

जोधपुर

अजमेर

इलाहाबाद

बनारस

अहमदाबाद

अहमदनगर

गोलकुंडा

गोआ

अरब सागर

बङ्गाल की खाड़ी

नक़शा

भारतवर्षका

सन् १६०५ ई०

मीलों का स्केल

गया (१६००)। तथापि निज़ामशाही राज्य पर उनका अधिकार न हो सका। अपने बड़े लड़के सलीम के विद्रोही बन जाने के समाचार को पाकर अकबर ने तुरन्त युद्ध रोक कर आगरे की यात्रा की। इस चढ़ाई में अकबर ने केवल बरार और खानदेश को जीत कर अपने राज्य में मिला लिया।

(३) अन्त-काल की निराशा—अकबर का प्रारंभिक जीवन-काल जैसा समुन्नत बीता, वैसा ही उसका अन्तिम समय अनेक चिन्ताओं से व्यथित होने के कारण दुःख में बीता। उसके तीन लड़के थे। सलीम, दानियाल और मुराद। सलीम का जन्म सन् १५६९ में हुआ था। अन्य लड़के उससे छोटे थे। ये लड़के वीर, उदार और चतुर थे। लेकिन सब को शराब पीने का शौक़ था। वे भिन्न भिन्न प्रान्तों के सूबेदार थे, इससे उन्हें अनेक लड़ाइयाँ भी लड़नी पड़ी थीं। सन् १५९९ में मुराद की मृत्यु हुई। बाद को दानियाल पर अकबर की प्रीति अधिक देख कर सलीम को सन्देह हुआ कि बादशाह के मरने के बाद दानियाल ही गद्दी का अधिकारी बनेगा। यह सोचकर जिस समय अकबर दक्षिण में अहमदनगर के युद्धों में फँसा था, सलीम ने ठीक उसी समय मौका देखकर उसके विरुद्ध विद्रोह खड़ा किया और स्वयं राजचिह्न धारण कर लिये। यह ख़बर पाकर अकबर तुरंत आगरे वापस आया और अबुलफ़ज़ल को दूसरे रास्ते से आकर सलीम को पकड़ने के लिए लिखा। अबुलफ़ज़ल बड़ा बुद्धिमान पुरुष था। परंतु सलीम को संदेह था कि पिता को मुझसे नाराज़ करानेवाला अबुलफ़ज़ल ही है। अतः जिस समय अबुल फ़ज़्ल बुंदेलखंड की राह होकर आगरे की ओर आ रहा था, सलीम ने एक आदमी द्वारा उसकी हत्या करवा दी

गया था। केवल चार घंटे तक सोता था, बाक़ी समय में वह कुछ न कुछ कार्य किया ही करता था। राज्य का प्रत्येक भाग वह स्वयं जाकर देखता था। उसका रहन-सहन भी बड़ा सादा था। वह दयालु था। इससे लोगों पर उसका प्रभाव भी बहुत पड़ता था। प्रतिदिन एक बार वह दरबार अवश्य करता और लोगों की कही हुई बातों को ध्यान में रखता था। उस समय प्रत्येक व्यक्ति उससे भेंट कर सकता था। मर्दाने खेल, शिकार, बाग़-बग़ीचे, चित्रकला, संगीत इत्यादि विषयों का उसे बहुत चाव था। अकबर ने एक एक करके अनेक प्रदेश जीत कर अपना साम्राज्य विस्तृत कर लिया था। केवल इसी से उसकी योग्यता का परिचय नहीं मिलता, बल्कि सरलता से राज्य-व्यवस्था चलाने के लिए और शत्रु को शीघ्र वश में करके शान्ति स्थापित करने में उसने अपनी बुद्धि का परिचय दिया था। भिन्न भिन्न प्रदेशों को जीतने का उद्योग करते हुए लोक-सुख की वृद्धि करके, राजा के परम कर्तव्य को पूरा करने में अकबर ने प्रारंभ से ही उत्साह दिखाया था। पहले लगभग ४०० वर्ष तक अफ़ग़ानों का शासन भारत पर रहा। इतने समय में अनेक प्रकार के नुकसान और अनर्थ होने से लोग दीन व दुखी बन गये। अफ़ग़ानों का स्वभाव ऐसा क्रूर और विध्वंसक था कि वे देश को केवल अपने सैन्य-बल पर ही अपने अधीन रख सके थे। उन्होंने प्रजा के सुख का कोई ध्यान नहीं रक्खा था। बाबर मुग़ल था। उसके आते ही स्थिति बदल गई और अकबर ने पिछली भूलों को समझ कर उन्हें दूर किया और प्रजा के सुख के लिए नवीन योजनायें कीं। उसके इन कार्यों से उसके शासन की जड़ जम कर चिरस्थाई बन गई। रैयत के साथ ममता से और निष्पक्ष दृष्टि से व्यवहार करके

थे, अपने विचारों के पक्के थे। इन दो अद्वितीय पुरुषों की सहायता मिलने से सन् १५७९ से २५ वर्ष तक अकबर ने नवीन धर्म की सिद्धि प्राप्त की। इनमें फ़ैज़ी विद्वान् होने के अलावा विरक्त भी था। उसने अनेक संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद फ़ारसी में किया था। फ़ज़ल विद्वान् भी था और साथ ही साथ शूर राजनीतिज्ञ और प्रबन्धक भी था। उसकी और अकबर की ऐसी मित्रता हुई कि आगे के २५ वर्षों के प्रत्येक महत्त्व के कार्य में अकबर उससे अवश्य सहायता लेता। पहले अपने स्तुत्य उद्देश पर लोगों का विश्वास जमाने के लिए अकबर ने मुसलमान, हिन्दू, पारसी, ईसाई इत्यादि धर्मों के बड़े बड़े विद्वान् उपदेशक दूर दूर देशों से आगरे में बुलाये और उनके साथ धर्म के विषय में वादविवाद शुरू किया। इस वादविवाद के लिए उसने एक बड़ा सुन्दर महल बनवाया था। प्रति गुरुवार की रात को सभा की जाती और उसमें वादविवाद होता। अकबर और फ़ज़ल तटस्थ होकर प्रत्येक की बात को सुनते। कुछ समय में भिन्न भिन्न धर्मों के उदात्त तत्त्वों को एकत्र करके अकबर ने अपने नवीन धर्म की स्थापना [illegible] पड़ गया। पारसि[illegible] पामता को उसने [illegible] बड़ा प्रसिद्ध ब्राह्मण दरबारी और अकबर का मित्र राजा बीरबल भी इस काम में सहायता देता था। अकबर स्वयं इस नवीन धर्म का प्रवर्तक बना। इस धर्म का प्रचार हुआ। लेकिन वह चिरस्थायी न रहा। राजा बीरबल काश्मीर की चढ़ाई में मरा। टोडरमल व अन्य साथी भी चल बसे, अबुलफ़ज़ल मारा गया। इससे अकबर की सारी आशाओं पर पानी फिर गया। अन्त के दो-तीन वर्षों में उसका चित्त ठिकाने न रहा, इसीलिए

नूरजहाँ

जहाँगीर

ताज़महल

ममताज महल

थी। अपने ऐश-आराम में विघ्न डालनेवाले धर्म-नियमों को भी वह नहीं मानता था। उसकी सवारी का ठाठ निराला था। उसने अपना जीवन-चरित स्वयं लिखा है।

अंगरेज़ लोगों का भारत के साथ सम्बन्ध पहले पहल जहाँगीर के ही शासन-काल में हुआ था। इस सम्बन्ध के सौ वर्ष पूर्व से ही भारत की जानकारी यूरोप में अच्छी तरह फैल गई थी और वहाँ के अनेक व्यापारी यहाँ व्यापार के लिए आया करते थे। हाकिन्स (सन् १६०८) और सर टामस रो (सन् १६१५) इंग्लैंड की ओर से बादशाह के पास व्यापार करने की आज्ञा माँगने आये थे। लेकिन उन्हें कोई ख़ास सहूलियत न मिल सकी। केवल सूरत में एक कोठी खोलने की परवानगी उन्हें मिली थी। इसी समय अंगरेज़ों ने अपना व्यापार भारत के साथ प्रारम्भ किया। इन दोनों अंगरेज़ों के लिखे हुए यात्राओं के वर्णन बड़े मनोहर हैं।

(५) शाहजहाँ का शासन-काल—मुग़ल-वंश में सब से अधिक भाग्यशाली बादशाह शाहजहाँ ही हुआ है। राजगद्दी पाने के लिए उसे कितने ही दुष्कर्म अवश्य करने पड़े, परन्तु इसके बाद उसने अपने चातुर्य को प्रकट किया। वह विषयी था, तथापि उसने शासन के कार्य में कोई गड़बड़ नहीं होने दिया। आसफ़खाँ और सादुल्लाख़ाँ उसके वज़ीर थे। आसफ़ख़ाँ उसका ससुर था। वह शासन-कार्य में बड़ा दक्ष था। उसकी मृत्यु के बाद सन् १६४४ से ५६ तक सादुल्लाख़ाँ ने वज़ीरी का काम किया था। सादुल्लाख़ाँ पहले हिन्दू था। लेकिन बड़ी उम्र में इस्लाम-धर्म स्वीकार कर लिया था। वह बड़ा चतुर, हिसाब-किताब में पक्का और अपने काम में अनुभवी था। शाहजहाँ ने

साध्य कार्य किये। धर्म के मामले में यह आग्रही न था। परन्तु अपने धर्माचार में यह दृढ़ था। उसने हीरे इत्यादि मणियों से जड़ा हुआ एक मयूरासन तैयार कराया था। उसके बनने में ६ करोड़ से भी अधिक रुपये खर्च हुए थे। शाहजहाँ के समय में बादशाही ज़नानख़ाने की शान विशेष रूप से बढ़ गई थी। तोपख़ाने की उन्नति करके उसने उसके बल पर अनेक युद्ध जीते थे। तोपों के काम में उसने यूरोपियों को भर्ती किया था। उसने अपने आदमी इस काम में तैयार नहीं किये। यूरोपीय युद्धकला की ओर मुग़लों ने ध्यान नहीं दिया। इसीसे इस देश में यूरोपियों का प्रवेश सहज में हो गया। दिल्ली और आगरे में अनेक इमारतें बनवा कर उन शहरों की बड़ी उन्नति की। शाहजहाँ का स्मारक अर्थात् उसकी प्यारी बेगम मुमताज़ महल की क़ब्र अर्थात् आगरा का ताजमहल यमुना के किनारे आगरे से दक्षिण की ओर डेढ़ कोस पर बना हुआ है। इसके बनने में ३ करोड़ रुपये खर्च हुए थे। यह १२ वर्ष में बन कर तैयार हुआ था। सभी काम भारतीय कारीगरों ने किया था। इतनी सुन्दर और गुम्बज़दार इमारत पृथिवी पर दूसरी नहीं है। शाहजहाँ के राज्य में २२ सूबे थे। इसकी आय ३६ करोड़ रुपये वार्षिक थी। अकबर की चलाई हुई मालगुज़ारी की पद्धति शाहजहाँ ने दक्षिण में भी चलाई। मंडेस्लो, टवर्नियर, बर्नियर इत्यादि यात्री शाहजहाँ के शासनकाल में भारत में आये थे। उन्होंने जो वर्णन लिखा है वह विस्तारपूर्वक है। *शाहजहाँ की मृत्यु २२ जनवरी सन् १६६६ में आगरे के किले में हुई।*

औरङ्गज़ेब (युवावस्था)

मन हो जाने के कारण यह प्रारंभ से ही अपनी फ़ौज के साथ औरंगज़ेब से जा मिला था और उसी की सहायता से बाद को औरंगज़ेब को दिल्ली का तख़्त मिला। उसी ने शुजा को हरा कर उससे बंगाल-प्रांत छीन लिया था। इन कार्यों की सफलता को देख कर औरङ्गज़ेब मन ही मन उससे डरने लगा। इसी से वह मीर जुमला के नाश का मौक़ा खोजने लगा। यह कृतघ्न स्वभाव का एक नमूना है। बाद को आसाम-प्रान्त जीतने के लिए बादशाह ने उसको वहाँ भेजा। उस प्रान्त की आबहवा अनुकूल न होने के कारण वह वृद्ध अनुभवी सरदार वहीं बीमार पड़कर सन् १६६१ में मर गया। विदेश से आये हुए लोगों को इस देश में अपना पराक्रम दिखाने की कितनी सुविधा उस समय थी, यह बात मीर जुमला, नूरजहाँ, महम्मदग़ावाँ, मलिक अम्बर, क्लाइव, डूप्ले, वारेनहेस्टिंग्ज़ इत्यादि के उदाहरण भारतीय इतिहास में सहज ही मिल सकते हैं।

(३) बुंदेलखंड का राजा छत्रसाल (सन् १६५०-१७३३)—बुंदेलखंड-प्रान्त मुगलों की अधीनता में पूरी तरह से न आ पाया था। पहले के बादशाहों ने अनेक युद्ध करके वहाँ के राजपूतों को परास्त किया अवश्य, तथापि समय पाते ही वे स्वतंत्र हो जाते थे। बुंदेलखंड के बीरसिंहदेव नाम के राजा ने ही सलीम के कहने से सन् १६०२ में अबुलफ़ज़ल का ख़ून करा दिया था। औरङ्गज़ेब के समय में बीरसिंह का नाती चंपत बुंदेलखंड में महोबा में राज्य करता था। राज्य पाने के लिए जो युद्ध औरङ्गज़ेब ने अपने भाइयों के साथ किये थे, उनमें इस राजा ने औरङ्गज़ेब की सहायता की थी। लेकिन बाद

को अपने स्वभाव से लाचार होकर बादशाह ने चंपतराय के नाश का बीड़ा उठाया। दोनों में युद्ध शुरू हुआ। अंत को सन् १६६४ में चम्पतराय मारा गया। उसके छत्रसाल नाम का एक लड़का था। इसकी उम्र चौदह वर्ष की थी। इस राजकुमार ने अपनी वीरता के सहारे अनेक वर्षों तक बादशाही फ़ौजों के साथ टक्कर लेकर अपनी स्वतंत्रता रक्षित रक्खी। मराठों के शिवाजी से बुंदेलों के छत्रसाल की बड़ी मित्रता थी। बादशाही के विरुद्ध अन्त तक लड़ कर इसी ने अपनी सहायता के लिए बाजीराव को बुंदेलखंड में बुलाया था और सन् १७३३ में मरते समय अपने राज्य का तृतीयांश बाजीराव को दे गया था।

(४) राजपूतों के साथ युद्ध, ज़ज़िया कर (सन् १६६९-८१)—इस युद्ध के शुरू होने से पहले मुग़ल-बादशाह की सत्ता एकदम उन्नति के शिखर पर पहुँच चुकी थी। सन् १६६६ में औरंगज़ेब के अधिकार में जितना प्रदेश था, उतना प्रदेश पहले मुग़ल-साम्राज्य में न था। यदि औरङ्गज़ेब इतने ही से संतुष्ट रहता तो उसे आगे आनेवाली आफ़तें न झेलनी पड़तीं। लेकिन वह सोचने लगा कि मैं इस समय निश्चिन्त हूँ। इसलिए उसने हिन्दुओं के साथ छल करना शुरू किया। पहले उसने राजपूत राजाओं को जीतने का काम शुरू किया। अकबर की चलाई प्रथा के अनुसार राजपूत राजे अपने राज्य को सँभालते थे और बादशाही फ़ौज में नौकरी करते थे। इससे साम्राज्य के वास्तविक आधार स्तंभ वही लोग थे। पहले तो औरङ्गज़ेब ने उन राजाओं पर ज़ज़िया कर लगाने के सम्बन्ध में सख़्त हुक्म जारी किया। इसलिए उसके साथ ही साथ जहाँ-तहाँ गड़बड़ शुरू हुआ। जब मुसलमान अन्य राज्य जीतने

को खड़े हुए थे, उस समय परधर्मियों के संरक्षण के लिए अपनी फौज इत्यादि रखने का जो खर्च पड़ता था उसे पूरा करने के लिए खलीफा उमर ने यह कर पहले जारी किया था। अन्य देशों में जाकर वहाँ की प्रजा से अरब लोग कहते कि "तुम लोग मुसलमान बन कर हममें मिल जाओ तो तुमको भी हमारे ही समान हक़ मिलेंगे। यदि ऐसा न करोगे तो तुमको जज़िया देना पड़ेगा।" अर्थात् जो मुसलमान बन जाते वे विजेताओं के पक्ष में गिने जाते थे, अन्य लोग हलके गिने जाते थे। यह भेद भाव लोगों को बहुत अखरता था। इस भेद भाव को मिटाने के लिए अकबर ने यह कर उठा दिया था। यह जज़िया कर ब्राह्मणों से एक मोहर प्रतिवर्ष, गरीबों से ३॥ रुपया और अन्य लोगों से उनकी सामाजिक स्थिति के अनुसार ६० रुपया तक लिया जाता था।

राजपूताने में उस समय तीन राजे अगुआ थे, जयपुर के जयसिंह, जोधपुर के यशवन्तसिंह और उदयपुर के राजसिंह। इनमें से पहले दो राजे बादशाह की नौकरी में थे। यशवन्त सन् १६७८ में काबुल में मरा। इसके बाद बादशाह ने उसके राजकुमार को उसका राज्य नहीं दिया। इसलिए राजपूत लोग असन्तुष्ट हुए। बादशाह ने इनके साथ लड़ाई करने के लिए इतनी अधिक तैयारी की कि लोगों को यह अंदेशा होने लगा कि बादशाह शायद सारी पृथिवी को ही जीतने का प्रबन्ध कर रहा है। उसका सामना करने का भार राजसिंह पर पड़ा। राजपूत लोग सारे देश को [illegible] कर [illegible] औरंगजेब की सेना रसद और [illegible] कर डाले थे। [illegible]
[illegible]

मुगल राज्य

अहमदनगर, ब्रह्मपुरी इत्यादि स्थानों में उसके कितने ही वर्ष निकल गये। अन्त में उसे बड़ा दुःख हुआ। शाहज़ादा अकबर उसके भय से भाग कर ईरान चला गया, यहीं उसकी मृत्यु हुई। उसके अन्य तीन शाहज़ादे मुअज़्ज़म, आज़ीम और कामबख़्श आपस में एक दूसरे से बिगड़े और स्वयं राज्य पाने के लिए प्रयत्न करने लगे। बादशाह को पता लगा कि कहीं मेरे लड़के भी मेरे कार्यों का अनुसरण कर मेरी दुर्दशा न करें, इसलिए उसने अपनी मृत्यु होने तक अपने किसी लड़के को अपने पास तक न फटकने दिया। उसके सभी उद्देश असफल रहे। अपने हाथों बड़े बड़े अनर्थ हो जाने से उसे परलोक की भी कोई आशा न रही। यह विचार करके कि मेरा राज्य बड़ी जल्दी नष्ट हो जायगा और भूलों को दुरुस्त करने का अब समय भी नहीं रहा, उसे बड़ा कष्ट हुआ। अन्त में मराठों के आक्रमण और भी अधिक ज़ोरदार होने लगे। इससे उसे बुढ़ापे में अत्यंत कष्ट हुआ और इस प्रकार यह अन्तिम मुग़ल-सम्राट् २० फ़रवरी सन् १७०७ को अहमदनगर में मर गया। उसकी क़ब्र उसके स्थापित किये हुए औरंगाबाद नाम के शहर में रौज़ा के नाम से प्रसिद्ध है।

(६) औरङ्गज़ेब की योग्यता—इतिहास में औरंगज़ेब का शासन बड़े मार्के का गिना जाता है। औरंगज़ेब ने इतने प्रबल राज्य की शक्ति हिन्दू-धर्म के नाश करने के व्यर्थ मनोरथ को पूरा करने में ख़र्च की। अत्याचार, दुराग्रह, अविश्वास और कपटाचार से उसने अपने राज्य को अपने ही शासन-काल में नष्ट कर दिया। औरंगज़ेब का घरू व्यवहार और आचरण बहुत ही सुन्दर और

मुगल राज्य
बम्बई
पाण्डुचेरी
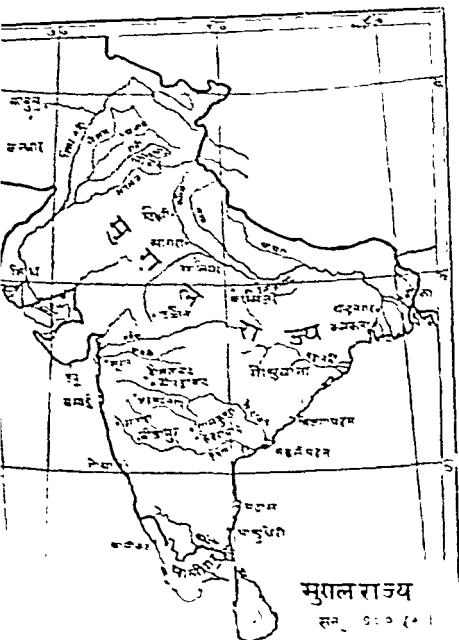
था, उसका रहन-सहन बिलकुल सादा था। अपने हाथ
र्खी हुई क़ुरान की प्रतियाँ बेच कर अपनी अन्तिम
करने के लिए उसने धन एकत्र किया था। उसके समान
म करनेवाला और निर्व्यसनी मनुष्य मिलना कठिन
प्रजा में ऐक्य स्थापित करना अकबर का उद्देश था। लेकिन
ों में फूट डाल कर अपनी रक्षा करना औरंगज़ेब को इष्ट था।
रंगज़ेब के समय में अंग्रेज़, फ्रेंच इत्यादि विदेशी व्यापारियों
ामत्ता बहुत बढ़ी। औरंगज़ेब के शासन-काल में राज्य की
ामदनी ४३ करोड़ रुपये वार्षिक थी। धर्म की बातों को छोड़
अन्य बातों में जो न्याय बादशाह करता था वह बिलकुल ठीक
होता था। "फतवा-ए-आलमगीरी" अर्थात् औरंगज़ेब के नियम
नामक ग्रंथ को उसीने लिखा था, जो आज भी धर्म-ग्रंथ की तरह
मान्य है। कर्मचारियों के अपराध क्षमा करना तो वह जानता ही
न था। उसकी मृत्यु के बाद मुग़ल-साम्राज्य कई भागों में बँट
गया और अनेक नये मुसलमानी राज्य क़ायम हो गये। इन राज्यों के
अनेक संस्थापक औरंगज़ेब से ही शिक्षा पाकर बड़े थे। वज़ीर आसद-
ख़ाँ और उसका लड़का ज़ुल्फ़िक़ारख़ाँ, अवध के नवाबों के मूल-
पुरुष सआदतख़ाँ, हैदराबाद के निज़ामों के मूल-पुरुष ग़ाज़ी-
उद्दीन और उसका प्रसिद्ध लड़का चिनकिलिचख़ाँ (निज़ा-
मुलमुल्क), बंगाल के सूबेदारों का मूल-पुरुष मुर्शिदकुलीख़ाँ,
इसी प्रकार दक्षिण में नाम कमानेवाला दाऊदख़ाँ पन्नी
[illegible] अनेक राजपूत और बुँदेले सरदार औरंगज़ेब की नौकरी कर-
[illegible] लोगों के द्वारा [illegible] में

गुरु गोविन्दसिंह

गुरु नानकशाह

और हुसैन को सेनापति का पद दिया। इन सैय्यद भाइयों के कामों से राज्य की बड़ी हानि हुई। बादशाह को उनका प्रमाद दुस्सह हो गया। इसलिए उसने उनको नष्ट करने का उद्योग किया। इधर राजपूतों ने अपना सङ्गठन करके मुग़लों के शासन को निर्बल कर दिया। इस पर हुसैन ने उन पर हमला करके उनके अगुआ अजितसिंह को हरा दिया और उसकी लड़की इन्द्रकुमारी को पकड़ कर उसका विवाह बादशाह के साथ कर दिया। अँगरेज़ डाक्टर हेमिल्टन ने बादशाह को रोग से मुक्त किया था। इसीलिए ईस्ट इण्डिया कम्पनी को उसने बङ्गाल-प्रान्त में ३९ शहर देकर सब करों से माफ़ कर दिया। अन्त में सैय्यद्-भाइयों से बादशाह की जो अनबन थी वह बहुत बढ़ गई। लेकिन उनका नाश करने के जो जो उपाय बादशाह ने किये वे सब उन दोनों पर प्रकट हो गये। हुसैनअली को उसने दक्षिण की सूबेदारी पर नियुक्त करके भेज दिया। वहाँ पहुँच कर हुसैनअली ने मराठों से मित्रता कर ली और उनकी फ़ौज लेकर वह दिल्ली पर चढ़ आया। उन दोनों सैय्यद्-भाइयों ने बादशाह को पद-च्युत करके उसे मार डाला और सन् १७१९ में महम्मदशाह को तख्त पर बैठाया। इन्हीं दोनों सैय्यद्-भाइयों की मदद से पेशवा बालाजी विश्वनाथ को स्वराज्य की सनद मिली। इसका हाल आगे दिया जायगा।

(४) महम्मदशाह (सन् १७१९-४८)—महम्मद शाह ने शीघ्र ही बड़ी युक्ति से सैय्यद्-बन्धुओं को हराया और उन्हें मार डाला। महम्मदशाह में काम करने का उत्साह न था। उसने शासन के काम में अधिक ध्यान न दिया। वह सदा ऐश आराम में ही रहा करता। इसके समय में [illegible] के टुकड़े हुए

मिर्ज़ा ग़ालिब

और हुसेन को सेनापति का पद दिया। इन सैय्यद्-भाइयों के कामों से राज्य की बड़ी हानि हुई। बादशाह को उनका प्रभाव दुस्सह हो गया। इसलिए उसने उनको नष्ट करने का उद्योग किया। इधर राजपूतों ने अपना सङ्गठन करके मुग़लों के शासन को निर्बल कर दिया। इस पर हुसेन ने उन पर हमला करके उनके अगुआ अजितसिंह को हरा दिया और उसकी लड़की इन्द्रकुमारी को पकड़ कर उसका विवाह बादशाह के साथ कर दिया। अँगरेज़ डाक्टर हेमिल्टन ने बादशाह को रोग से मुक्त किया था। इसीलिए ईस्ट इण्डिया कम्पनी को उसने बङ्गाल-प्रान्त में ३९ शहर देकर सब करों से माफ़ कर दिया। अन्त में सैय्यद्-भाइयों से बादशाह की जो अनबन थी वह बहुत बढ़ गई। लेकिन उनका नाश करने के जो जो उपाय बादशाह ने किये वे सब उन दोनों पर प्रकट हो गये। हुसेनअली को उसने दक्षिण की सूबेदारी पर नियुक्त करके भेज दिया। वहाँ पहुँच कर हुसेनअली ने मराठों से मित्रता कर ली और उनकी फ़ौज लेकर वह दिल्ली पर चढ़ आया। उन दोनों सैय्यद्-भाइयों ने बादशाह को पद-च्युत करके उसे मार डाला और सन् १७१९ में महम्मदशाह को तख़्त पर बैठाया। इन्हीं दोनों सैय्यद्-भाइयों की मदद से पेशवा बालाजी विश्वनाथ को स्वराज्य की सनद मिली। इसका हाल आगे दिया जायगा।

(४) महम्मदशाह (सन् १७१९-४८)—महम्मद शाह ने शीघ्र ही बड़ी युक्ति के साथ सैय्यद्-बन्धुओं को हराया और उन्हें मार डाला। महम्मदशाह में काम करने का उत्साह न था। उसने शासन के काम में अधिक ध्यान न दिया। वह सदा ऐश-आराम में ही पड़ा रहा। उसके समय में राज्य के टुकड़े टुकड़े

नादिरशाह

मिला दी। बाद को सन् १७३८ में कुछ बहाना करके उसने एक बड़ी फ़ौज लेकर दिल्ली पर चढ़ाई की। बादशाह को उसने क़ैद किया और स्वयं उसके महल में रहा। नादिरशाह के मारे जाने की झूठी ख़बर फैलते ही दिल्ली के निवासियों ने उसके कुछ सिपाहियों को मार डाला। यह देख कर प्रजा में भय उत्पन्न करने के लिए उसने शहर को लूटने और लोगों को क़त्ल करने का हुक्म दे दिया। फ़ौज ने शहर लूटना और मार-काट करना शुरू किया। इससे शहर के गली-कूचे मरे हुए आदमियों की लाशों से पट गये। लगभग ३० हज़ार से भी अधिक आदमी मारे गये। मुहम्मदशाह हाथ जोड़ कर और आँखों में आँसू भर कर नादिरशाह के सामने गया और मारकाट बन्द करने के लिए प्रार्थना की। "भारत के बादशाह की प्रार्थना व्यर्थ नहीं की जा सकती", यह कह कर उसने मार-काट बन्द करवा दी। नादिरशाह दिल्ली में कुल ५८ दिन रहा। इतने समय में उसने बादशाह से लगा कर ग़रीब से ग़रीब तक को भी लूटने से न छोड़ा। इस लूट में उसे ९ करोड़ से ३० करोड़ रुपए तक मिलने का अनुमान लगाया जाता है। मयूरासन और कोहनूर हीरा जो मुग़ल-वंश के वैभव के नमूने थे, नादिरशाह अपने साथ ले गया। लौटने पर सन् १७४७ में उसे किसी ने मार डाला।

(६) राज्य के टुकड़े—इस प्रलय से मुग़ल-बादशाही की गाँठ टूट गई। सिन्धु-नदी के उस पार का भू-भाग नादिरशाह ने अपने अधिकार में ले लिया। राजपूत रजवाड़े पहले ही से स्वतन्त्र हो चुके थे। दक्षिण में सन् १७२४ में निज़ाम स्वतन्त्र हुआ। उसके साथ ही साथ मराठों के विरोध की जड़ जमी। निज़ाम की मृत्यु सन् १७४८ में हो जाने पर उसका लड़का नासिर-

जंग, इसके बाद उसका भतीजा मुज़फ़्फ़रजंग, बाद को तीसरा लड़का सलाबतजंग गद्दी पर बैठे। सन् १७६१ में निज़ामअली गद्दी पर बैठा। इसने अंगरेज़ों का सार्वभौमत्व स्वीकार करके वह सन् १८०३ में मरा। मालवा, गुजरात इत्यादि प्रान्तों पर मराठों का अधिकार हो गया। पंजाब-प्रान्त को सिक्खों ने ले लिया। बंगाल-प्रान्त में अलीवर्दीख़ाँ सूबेदार था। उसके मरने पर सिराजुद्दौला से सन् १७५७ में वह प्रान्त अंगरेज़ों ने छीन लिया। अवध की सूबेदारी सआदतख़ाँ नाम के एक सरदार के हाथ में थी। सआदतख़ाँ सन् १७३९ में नादिरशाह की लड़ाई में मारा गया। इसके मारे जाने पर उसका भतीजा सफ़दरजंग अवध का सूबेदार बना। उसने दिल्ली में वज़ीर का भी काम किया। इसी से अवध के नवाबों को "नवाब वज़ीर" की उपाधि मिली। सन् १७५४ में सफ़दरजंग के मरने पर उसका लड़का शुजाउद्दौला सूबेदार बना। इस समय से अवध का सूबा स्वतन्त्र हुआ। शुजाउद्दौला ने अंगरेज़ों की सहायता लेकर अपना बचाव किया। लेकिन सन् १७७० में हाफ़िज़रहमतख़ाँ की लड़की ने उसका वध कर डाला। कर्नाटक में अनेक परिवर्त्तन होने के बाद अंगरेज़ों की मदद से अर्काट का नवाब महम्मदअली स्वतन्त्र हो गया। सारांश यह कि मुग़ल बादशाहों के निर्बल होते ही भिन्न भिन्न प्रान्त अलग और अरक्षित हो गये। इसी से प्रत्येक के साथ अलग और स्वतंत्र व्यवहार करके अंगरेज़ों ने सब को धीरे धीरे अपने वश में कर लिया। ब्रिटिश शासन का मुख्य इतिहास ऐसे ही व्यवहारों से भरा पड़ा है। महम्मदशाह सन् १७४८ में मरा।

-

जंग, इसके बाद उसका भतीजा मुज़फ़्फ़रजंग, बाद को तीसरा लड़का सलाबतजंग गद्दी पर बैठे। सन् १७६१ में निज़ामअली गद्दी पर बैठा। अन्त में अंगरेज़ों का सार्वभौमत्व स्वीकार करके वह सन् १८०३ में मरा। मालवा, गुजरात इत्यादि प्रान्तों पर मराठों का अधिकार हो गया। पंजाब-प्रान्त को सिक्खों ने ले लिया। बंगाल-प्रान्त में अलीवर्दीख़ाँ सूबेदार था। उसके मरने पर सिराजुद्दौला से सन् १७५७ में वह प्रान्त अंगरेज़ों ने छीन लिया। अवध की सूबेदारी सआदतख़ाँ नाम के एक सरदार के हाथ में थी। सआदतख़ाँ सन् १७३९ में नादिरशाह की चढ़ाई में मारा गया। इसके मारे जाने पर उसका भतीजा सफ़दरजंग अवध का सूबेदार बना। उसने दिल्ली में वज़ीर का भी काम किया। इसी से अवध के नवाबों को "नवाब वज़ीर" की उपाधि मिली। सन् १७५४ में सफ़दरजंग के मरने पर उसका लड़का शुजाउद्दौला सूबेदार बना। इस समय से अवध का सूबा स्वतन्त्र हुआ। शुजाउद्दौला ने अंगरेज़ों की सहायता लेकर अपना बचाव किया। लेकिन सन् १७७० में हाफ़िज़रहमतख़ाँ की लड़की ने उनका वध कर डाला। कर्नाटक में अनेक परिवर्तन होने के बाद अंगरेज़ों की मदद से अर्काट का नवाब महम्मदअली स्वतन्त्र हो गया। तात्पर्य यह कि मुग़ल बादशाही के निर्बल होने ही भिन्न भिन्न प्रान्त अलग और स्वाधीन हो गये। इसी से प्रत्येक के साथ अलग और स्वतंत्र व्यवहार करके अंगरेज़ों ने सब को धीरे धीरे अपने वश में कर लिया। ब्रिटिश शासन का मुख्य इतिहास ऐसे ही व्यवहारों से भरा पड़ा है। महम्मदशाह सन् १७४८ में मरा।

जंग, उसके बाद उसका भतीजा मुज़फ्फरजंग, बाद को तीसरा लड़का सलाबतजंग गद्दी पर बैठे। सन् १७६१ में निज़ामअली गद्दी पर बैठा। अन्त में अंगरेज़ों का सार्वभौमत्व स्वीकार करके वह सन् १८०३ में मरा। मालवा, गुजरात इत्यादि प्रान्तों पर मराठों का अधिकार हो गया। पंजाब-प्रान्त को सिक्खों ने ले लिया। बंगाल-प्रान्त में अलीवर्दीख़ाँ सूबेदार था। उसके मरने पर सिराजुद्दौला से सन् १७५७ में वह प्रान्त अंगरेज़ों ने छीन लिया। अवध की सूबेदारी सआदतख़ाँ नाम के एक सरदार के हाथ में थी। सआदतख़ाँ सन् १७३९ में नादिरशाह की चढ़ाई में मारा गया। इसके मारे जाने पर उसका भतीजा सफ़्दरजंग अवध का सूबेदार बना। उसने दिल्ली में वज़ीर का भी काम किया। इसी से अवध के नवाबों को "नवाब वज़ीर" की उपाधि मिली। सन् १७५४ में सफ़्दरजंग के मरने पर उसका लड़का शुजाउद्दौला सूबेदार बना। उस समय से अवध का सूबा स्वतन्त्र हुआ। शुजाउद्दौला ने अंगरेज़ों की सहायता लेकर अपना बचाव किया। लेकिन सन् १७७० में हाफ़िज़रहमतख़ाँ की लड़की ने उसका वध कर डाला। कर्नाटक में अनेक परिवर्त्तन होने के बाद अंगरेज़ों की मदद से अर्काट का नवाब महम्मदअली स्वतन्त्र हो गया। सारांश यह कि मुख्य बादशाही के निर्बल होते ही भिन्न भिन्न प्रान्त अलग और अरक्षित हो गये। इसी से प्रत्येक के साथ अलग और स्वतंत्र व्यवहार करके अंगरेज़ों ने सब को धीरे धीरे अपने वश में कर लिया। ब्रिटिश शासन का मुख्य इतिहास ऐसे ही व्यवहारों से भरा पड़ा है। महम्मदशाह सन् १७४८ में मरा।

मिलता था। बाद को सन् १७३८ में कुछ बहाना करके उसने एक बड़ी फौज लेकर दिल्ली पर चढ़ाई की। बादशाह को उसने कैद किया और स्वयं उसके महल में रहा। नादिरशाह के मारे जाने की झूठी खबर फैलने पर दिल्ली के निवासियों ने उसके कुछ सिपाहियों को मार डाला। यह देख कर प्रजा में भय उत्पन्न करने के लिए उसने शहर को लूटने और लोगों को कत्ल करने का हुक्म दे दिया। फौज ने शहर लूटना और मार-काट करना शुरू किया। इससे शहर के गली-कूचे मरे हुए आदमियों की लाशों से पट गए। लगभग ३० हजार से भी अधिक आदमी मारे गए। मुहम्मदशाह हाथ जोड़ कर और आँखों में आँसू भर कर नादिरशाह के सामने गया और मारकाट बन्द करने के लिए प्रार्थना की। 'भारत के बादशाह की प्रार्थना व्यर्थ नहीं की जा सकती', यह कह कर उसने मार-काट बन्द करा दी। नादिरशाह दिल्ली में कुल ५८ दिन रहा। इतने समय में उसने बादशाह से लेकर गरीब से गरीब तक को भी लूटने में न छोड़ा। इस लूट में उसे ३० करोड़ रुपए तक मिलने का अनुमान लगाया जाता है। मयूरासन और कोहनूर हीरा, जो मुगल वैभव के समय के नमूने थे, नादिरशाह अपने साथ ले गया। लौटने पर सन् १७४७ में उसे किसी ने मार डाला।

(६) राज्य के टुकड़े—इस प्रकार से मुगल-बादशाही के पाए टूट गए। सिन्धु नदी के उस पार का मुल्क नादिरशाह ने अपने अधिकार में ले लिया। राजपूत रजवाड़े पहले ही से स्वतन्त्र हो चुके थे। दक्षिण में सन् १७२४ में निज़ाम स्वतन्त्र हुआ। उसके बाद ही राज्य मराठों के विरोध की जड़ जमी। निज़ाम की मृत्यु सन् १७४८ में हो जाने पर उसका राज्य कमि

१७५४ में बादशाह का वध किया और एक शाहज़ादे को गद्दी पर बिठा कर उसका नाम आलमगीर रक्खा और शासन का काम अपने हाथों करने लगा। यह द्वितीय आलमगीर के नाम से प्रसिद्ध है। उसका कार्यभार ग़ाज़ीउद्दीन स्वतंत्रता से करता था। इससे इन दोनों में शीघ्र ही अनबन हो गई। ग़ाज़ीउद्दीन को मराठों की सहायता मिलती थी। इसी से वे लोग दिल्ली में आकर बस गये। इससे दिल्ली में दो पक्ष हो गये। एक पक्ष में ग़ाज़ीउद्दीन और मराठे थे। दूसरे पक्ष में रुहेले, अहमदशाह अब्दाली तथा अन्य मुसलमान थे। अब्दाली ने सन् १७५७ में दिल्ली पर फिर हमला करके दिल्ली और मथुरा को लूटा। हज़ारों आदमियों का वध किया और दिल्ली का शासन नजीबख़ाँ रुहेले को देकर पंजाब-प्रान्त में अपने लड़के तैमूरशाह को नियत कर वह वापस गया। अब्दाली के आक्रमणों से बादशाही की रक्षा करने का काम मराठों पर आ गया। अफ़ग़ान-शासन को न चाहनेवाले ग़ाज़ीउद्दीन के समान मुसलमानों ने मराठों का साथ दिया। नजीबख़ाँ व अन्य मुसलमान अब्दाली के पक्ष में थे। मराठों ने पंजाब-प्रान्त पर अपना अधिकार फिर जमाया। इसी से अब्दाली ने फिर सन् १७५९ में भारत पर चढ़ाई की। अन्त में सन् १७६१ में मराठों ने अब्दाली के साथ पानीपत के मैदान में युद्ध किया। इस युद्ध को पानीपत की तीसरी लड़ाई कहते हैं। इसका विस्तृत विवरण मराठा-शासन-काल में दिया गया है। इन लड़ाई के गड़बड़ में ही आलमगीर का वध किया गया।

(२) शाहआलम (सन् १७६१-१८०६)—दिल्ली में ऊपर बताई गई घटनाएँ जिस समय हो रही थीं, उसी समय आलमगीर का लड़का शाहज़ादा अलीगौहर बङ्गाल की ओर भाग गया

१७५४ में बादशाह का वध किया और एक शाहज़ादे को गद्दी पर बिठा कर उसका नाम आलमगीर रक्खा और शासन का काम अपने हाथों करने लगा। यह द्वितीय आलमगीर के नाम से प्रसिद्ध है। उसका कार्य-भार ग़ाज़ीउद्दीन स्वतंत्रता से करता था। इससे इन दोनों में शीघ्र ही अनबन हो गई। ग़ाज़ीउद्दीन को मराठों की सहायता मिलती थी। इसी से वे लोग दिल्ली में आकर बस-गये। इससे दिल्ली में दो पक्ष हो गये। एक पक्ष में ग़ाज़ीउद्दीन और मराठे थे। दूसरे पक्ष में रुहेले, अहमदशाह अब्दाली तथा अन्य मुसलमान थे। अब्दाली ने सन् १७५७ में दिल्ली पर फिर हमला करके दिल्ली और मथुरा को लूटा। हज़ारों आदमियों का वध किया और दिल्ली का शासन नजीबख़ाँ रुहेले को देकर पंजाब-प्रान्त में अपने लड़के तैमूरशाह को नियत कर वह वापस गया। अब्दाली के आक्रमणों से बादशाही की रक्षा करने का काम मराठों पर आ गया। अफ़ग़ान-शासन को न चाहनेवाले ग़ाज़ी-उद्दीन के समान मुसलमानों ने मराठों का साथ दिया। नजीबख़ाँ व अन्य मुसलमान अब्दाली के पक्ष में थे। मराठों ने पंजाब-प्रान्त पर अपना अधिकार फिर जमाया। इसी से अब्दाली ने फिर सन् १७५९ में भारत पर चढ़ाई की। अन्त में सन् १७६१ में मराठों ने अब्दाली के साथ पानीपत के मैदान में युद्ध किया। इस युद्ध को पानीपत की तीसरी लड़ाई कहते हैं। इसका विस्तृत विवरण महाराष्ट्र-शासन-काल में दिया गया है। इस लड़ाई के महत्त्व का [illegible] किया गया

(२) शाहआलम [illegible] —दिल्ली में [illegible] बनाई गई [illegible] आलम-गीर का लड़का शाहज़ादा [illegible]

सातवाँ अध्याय

मुग़ल-शाही का अन्त

सन् १७४८-१८१३

१—अहमदशाह और आलमगीर
२—मराठों का बढ़ना
३—शाहआलम
४—मुग़लों के समय की परिस्थिति
५—मुग़ल-बादशाही के विनाश के कारण

(१) अहमदशाह (१७४८-५४)—मुहम्मदशाह के मरने पर उसका लड़का अहमदशाह राजगद्दी पर बैठा। चारों ओर शत्रु उत्पन्न हो चुके थे। उनको वश में रखने का काम वह न कर सका। अफ़ग़ानिस्तान में राज्य करने वाले अहमदशाह अब्दाली ने भारत पर चढ़ाई करना शुरू किया। यह अहमदशाह अब्दाली पहले नादिरशाह के पास नौकर था। नादिरशाह के मरने पर उसने अफ़ग़ानिस्तान में अपना स्वतंत्र राज्य बना लिया। सन् १७४८ में उसने भारत पर पहली चढ़ाई की। दिल्ली के अहमदशाह ने मानपुर की लड़ाई में उसे हरा दिया। फिर सन् १७५१ में उसने भारत पर हमला किया। इस समय अहमदशाह ने लाहौर और मुलतान के सूबे देकर उसे लौटा दिया। वज़ीर सफ़-दर जंग और निज़ामुलमुल्क के सम्बन्धी गाज़ीउद्दीन के बीच दिल्ली में भयानक झगड़ा हुआ। इस झगड़े में गाज़ीउद्दीन ने सब

के बने कपड़े बहुत प्रसिद्ध थे। धन-धान्य की बहुतायत होने के कारण लोगों की माँगें यहीं की चीज़ों से ही पूरी हो जाती थीं। विदेश के व्यापारी यहाँ से नक़द दाम देकर ही चीज़ें ख़रीद कर अपने देश को ले जाते थे। भारत का धन विदेश ले जाना एक बड़ा अपराध गिना जाता था। टेरी हिल्डब्रेंड, टवर्नियर, थिवेनाट, फ्रायर इत्यादि यात्रियों का कथन है कि 'उस समय पश्चिमी राष्ट्रों की अपेक्षा भारत की उन्नति और वैभव कहीं अधिक अंशों में दिखलाई पड़ता।' टेरी का कथन है कि 'भारत में नौकर बड़े ही ईमानदार थे। वे अढ़ाई रुपये मासिक पर काम करते थे। मुग़लों की सत्ता अत्यधिक होने से राज्य में [illegible] [illegible] थी। फाँसी पर लटकाना, हाथी के पैर से कुचलवा देना, सूली पर चढ़ाना, जंगली पशुओं के पिंजड़े में डाल देना इत्यादि दण्ड विधियाँ उस समय यहाँ प्रचलित थीं, तथापि सामान्य दृष्टि से राज्य का प्रबन्ध अच्छा ही था।' टवर्नियर का कहना है कि 'भारत में यात्रा करना जितना सुलभ और सुखद है, उतना सुलभ और सुखद योरप में भी नहीं है।' मुग़लों के करों की आमदनी मुख्यतः ज़मीन के लगान और ख़िराज से मिलती थी। बाढ़ आने या सूखा पड़ जाने पर यदि फ़सलें मारी जातीं तो किसानों को लगान भी माफ़ कर दी जाती। इसके अलावा बादशाह की आमदनी के अन्य भी अनेक साधन थे। अमीरों का इन्तकाल [illegible] [illegible] उत्तराधिकारी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

न्याय-पद्धति—मुग़ल-शासन में न्याय अधिकांशतया अच्छा ही होता था। मुसलमानों का न्याय मुसलमानी क़ानूनों से और हिन्दुओं का पहले की स्मृतियों के अनुसार न्याय किया जाता था। सामाजिक और धार्मिक व्यवस्था सदा प्रजा के हाथों में रही। सरकार लगान कर लेने के अलावा प्रजा की अन्य बातों में बहुत कम हस्तक्षेप करती थी। जहाँगीर की "इन्साफ़ की साँकल" तो घर घर प्रसिद्ध थी।

ग्रन्थ-संग्रह—संस्कृत व अन्य भाषाओं के व्याकरण, अलंकार, वेदान्त, धर्मशास्त्र इत्यादि विषयों पर इस समय अनेक ग्रन्थों की रचना हुई। प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ, गंगेश इत्यादि नैयायिक, जगन्नाथ पंडितराज, कुवलयानंदकार अप्पय्या दीक्षित, काव्य-प्रकाश-कर्त्ता मम्मट, गीत गोविन्दकार जयदेव तथा इनके अलावा अनेक संस्कृत कवि मुस्लिम शासन के समय में हुए। यद्यपि इन पण्डितों का उदय हुआ था, तथापि संस्कृत की अवनति हो चली थी। पहले की प्राकृत भाषा का प्रचार उठ जाने से आजकल की मराठी, हिन्दी, बँगला, गुजराती इत्यादि भाषाओं का प्रचार सन् १५०० से शुरू हो गया था। पहले की वास्तविक मुसलमानी भाषाएँ तीन थीं—अरबी, फ़ारसी, और तुर्की। भारत में आनेवाले अनेक मुसलमान तुर्कीभाषा बोलते थे। इस देश में आने पर हिन्दीभाषा में इसे परिवर्तन हो गया। इसका उर्दू अर्थात् छावनी तुर्की शब्द [illegible]
[illegible]
[illegible]

कहते थे। ईसवी सन् के पूर्व इस प्रदेश में "राष्ट्रिक" या "रट्टे" नाम के लोग बसते थे। वे आगे चल कर बड़े प्रबल हुए। इसलिए उन्होंने अपना नाम "महाराष्ट्रिक" अथवा "महारट्टे" रक्खा। "रट्टे" शब्द "राष्ट्रिक" शब्द का अपभ्रंश है। उनके नाम पर इस देश का भी नाम "महाराष्ट्र" पड़ा। लोनावला—स्थान के समीप "भाजे" व "कार्ले" की जो गुफाएँ हैं, उनमें खुदे हुए शिलालेखों में "महारट्ठा" अर्थात् "मराठा" शब्द का प्रयोग इस देश के लोगों के लिए किया गया है।

ई० स० पू० ७२ वर्ष से सन् २१८ तक इस देश पर जिन राजाओं का शासन था उन्हें आंध्र भृत्य शातवाहन या शालिवाहन कहते हैं। इस बीच में दस-बीस वर्ष तक "शक" जाति (यवन) ने भी इस देश पर शासन किया था। इसका वृत्तांत विष्णु और मत्स्य पुराणों में मिलता है। शकों ने अपना नया संवत् चलाया था। इसी संवत् को बाद को शालिवाहनों ने भी स्वीकार किया था। इसलिए इस संवत् का नाम "शालिवाहन-शक" पड़ा। शक लोग हार कर देश से निकल भागे, लेकिन उनका चलाया संवत् आज भी यहाँ माना जाता है। शालिवाहनों के शासन-काल में महाराष्ट्र में बौद्धधर्म का प्रचार अधिक था। उस समय के राजा, धनिक, व्यापारी लोग बौद्ध-भिक्षुओं के लिए वन में गुफाएँ इत्यादि तैयार कराते थे। वे गुफाएँ आज-कल "भाजे", "कार्ले" इत्यादि स्थानों में अब तक बनी हुई हैं। इन गुफाओं में भिक्षु लोग अर्थात् बौद्ध-धर्मावलम्बी साधु भिक्षा माँग कर अपना जीवन व्यतीत करके वर्षा के दिनों में

तृतीय भाग

महाराष्ट्र-शासन-काल

ई० स० १६६४-१८१८

पहला अध्याय

स्वराज्य-स्थापन की शक्ति

१—महाराष्ट्र का पूर्व-वृत्तान्त २—बहमनी राज्य की आन्तरिक अवस्था
३—महाराष्ट्रों के उदय के कारण

(१) महाराष्ट्रों का पूर्व-वृत्तान्त—महाराष्ट्रों का क्रम-बद्ध प्राचीन इतिहास आज भी नहीं मिलता। प्राचीन काल के ताम्रपत्र, शिलालेख इत्यादि साधनों से कुछ विद्वानों ने प्राचीन राजवंशों की थोड़ी-बहुत छानबीन की है। इस संग्रह से महाराष्ट्रों की पूर्व-स्थिति थोड़ी-बहुत जानी जा सकती है। पहले महाराष्ट्र-देश का नाम "दक्षिणापथ" व "दक्खन" था। "दक्खन" शब्द दक्षिण का अपभ्रंश है। नर्मदा नदी के दक्षिण भूप्रदेश को यही नाम दिया गया है। लेकिन नर्मदा और कृष्णा के बीच के प्रदेश को महाराष्ट्र

कहते थे। ईसवी सन् के पूर्व इस प्रदेश में "राष्ट्रिक" या "रट्ठे" नाम के लोग बसते थे। वे आगे चल कर बड़े प्रबल हुए। इसलिए उन्होंने अपना नाम "महाराष्ट्रिक" अथवा "महारट्ठे" रक्खा। "रट्ठे" शब्द "राष्ट्रिक" शब्द का अपभ्रंश है। उनके नाम पर इस देश का भी नाम "महाराष्ट्र" पड़ा। लोनावला—स्टेशन के समीप "भाजे" व "कार्ले" की जो गुफाएँ हैं, उनमें खुदे हुए शिलालेखों में "महारट्ठा" अर्थात् "मराठा" शब्द का प्रयोग इस देश के लोगों के लिए किया गया है।

ई० स० पू० ७३ वर्ष से सन् २१८ तक इस देश पर जिन राजाओं का शासन था उन्हें आंध्र भृत्य शातवाहन या शालिवाहन कहते हैं। इस बीच में कुछ वर्षों तक "शक" जाति (यवन) ने भी इस देश पर शासन किया था। इसका वृत्तांत विष्णु और मत्स्य पुराणों में मिलता है। शकों ने अपना नया संवत् चलाया था। इसी संवत् को आगे को शालिवाहनों ने भी स्वीकार किया था। इसलिए इस संवत् का नाम "शालिवाहन-शक" पड़ा। शक लोग इस देश से निकल गये, लेकिन उनका चलाया संवत् आज भी यहाँ माना जाता है। शालिवाहनों के शासन-काल में महाराष्ट्र में बौद्धधर्म का प्रचार अधिक था। उस समय के राजा, धनिक, व्यापारी लोग बौद्ध-भिक्षुओं के लिए धन से गुफाएँ इत्यादि तैयार कराते थे। ये गुफाएँ आजकल "नासिक" "कार्ले" इत्यादि स्थानों में अब तक बनी हुई हैं। इन गुफाओं के [illegible] [illegible]

तृतीय भाग

महाराष्ट्र-शासन-काल

ई० स० १६६४-१८१८

पहला अध्याय

स्वराज्य-स्थापन की शक्ति

१—महाराष्ट्र का पूर्व-वृत्तान्त २—बहमनी राज्य की आन्तरिक अवस्था
३—महाराष्ट्रों के उदय के कारण

(१) **महाराष्ट्रों का पूर्व-वृत्तान्त**—महाराष्ट्रों का क्रम बद्ध प्राचीन इतिहास आज भी नहीं मिलता। प्राचीन काल के ताम्रपत्र, शिलालेख इत्यादि साधनों से कुछ विद्वानों ने प्राचीन राजवंशों की थोड़ी-बहुत छानबीन की है। इस संग्रह से महाराष्ट्रों की पूर्व-स्थिति थोड़ी-बहुत जानी जा सकती है। पहले महाराष्ट्र-देश का नाम "दक्षिणपथ" व "दक्खन" था। "दक्खन" शब्द दक्षिण का अपभ्रंश है। नर्मदा नदी के दक्षिण भूप्रदेश को यही नाम दिया गया है। लेकिन तापी और तुङ्गभद्रा के बीच के प्रदेश का "महाराष्ट्र"

आकर रहते थे। इन बौद्ध-भिक्षुओं की भांति ब्राह्मणों को भी दान देने की प्रथा चल पड़ी। महाराष्ट्रवालों का विदेशों के साथ बहुत व्यापार होता था। विदेशों को माल भेजने के लिए उस समय भड़ौंच बहुत बड़ा बंदर था। शालिवाहनों की राजधानी पैठन-नगर थी। उस समय पैठन-नगर उन्नति पर था। प्रजा सुखी और धन-धान्य से पूर्ण थी।

सन् २१८ से ६०० तक का ऐतिहासिक वृत्तान्त अनिश्चित है। इसके बाद ६०० से ७५७ तक चालुक्यवंश का शासन रहा। इन चालुक्यों का शासन उत्तर में नर्मदा तक और दक्षिण में ठेठ कन्या कुमारी तक था। बीजापुर-ज़िले में बादामी नामक एक स्थान है। इसका पहला नाम वातापी या वातापीपुर था। यहीं चालुक्यों की राजधानी थी। इसी वंश के राजा द्वितीय पुलकेशी ने कन्नौज के राजा श्रीहर्ष को हराया था। हुएनसेङ्ग नाम के प्रसिद्ध चीनी यात्री ने इस राजा से भेंट की थी। इस चीनी यात्री ने जो वर्णन तत्कालीन महाराष्ट्र-देश का किया है उससे पता लगता है कि महाराष्ट्र उस समय पूरी उन्नति कर चुका था। पुलकेशी के भेजे हुए राजदूत ईरान के शाहंशाह के दरबार में रहते थे। उसके नक़्क़ाशी के चित्र अजंता की गुफा में अब भी देखे जा सकते हैं। चालुक्यों के समय में बौद्ध-धर्म की अवनति हो चली थी और वैदिक तथा जैन धर्म की उन्नति हो रही थी। चालुक्यों का अन्त होने पर राष्ट्रकूटों का शासन महाराष्ट्र-देश में प्रारम्भ हुआ। यही महाराष्ट्रों का पहला राजवंश है। इस राजवंश का शासन सन ७४८ से ९७३ तक रहा। इसकी राजधानी का नाम मान्यखेट था। आजकल यह स्थान निज़ाम राज्य में मान्यखेट के नाम से

और जिजाबाई में अधिक नहीं पटी। उसके दो बालक हुए। बड़े का नाम सम्भाजी था। इसका जन्म सन् १६२३ में हुआ था। छोटे का नाम शिवाजी था। उसका जन्म शिवनेरी-किले में वैशाख शुक्ल २ शनिवार शाके १५४९ ता० ७ अप्रैल सन् १६२७ के दिन हुआ (जेधे शकावली के प्रमाणानुसार उनकी जन्म-तिथि शुक्रवार फाल्गुन वदी ३ शाके १५५१ ता० १९ फरवरी १६३० है)। शाहजी ने बाद को अपना दूसरा विवाह किया। इस स्त्री का नाम तुकाबाई था। यह मोहिता की कन्या थी। इस स्त्री से व्यंकोजी नाम का पुत्र हुआ। बीजापुर की नौकरी में आकर शाहजी ने कर्नाटक में एक नया राज्य प्राप्त किया। यह तंजौर-राज्य उनके पुत्र व्यंकोजी को मिला। पूना और सूपा की दो जागीरें और शिवनेरी व चाकन के दो किले और उनके आस-पास की भूमि की मालगुज़ारी निज़ामशाह से शाहजी को मिली थी। उस निज़ामशाही के नष्ट होने पर बीजापुर के अधिकार में यह सब भूमि चली गई। वहाँ रहने पर भी यह शाहजी के ही अधिकार में रही। इस जागीर में शाहजी के लड़के शिवाजी और उसकी माता रहने लगीं।

(२) शिवाजी का बाल्यकाल—जिस समय शिवाजी का जन्म हुआ, उस समय महाराष्ट्र देश में बड़ी खलबली मची हुई थी। माता का लाड़-प्यार इस बालक पर विशेष था। शाहजी के प्रबन्धक दादाजी कोंडदेव और शिवाजी की माता जिजाबाई दोनों ने मिलकर शिवाजी को बचपन से अच्छी शिक्षा दी। इन दोनों ही व्यक्तियों ने राज्यों की उलट-पलट देखी थी। इसलिए जिजाबाई ने अपने पूर्वजों के शौर्य के कृत्य और उनके समय की बातें

समर्थ गुरु रामदास

पास ही प्रतापगढ़ का क़िला बनाया। इसके बाद शिवाजी ने हिरडस के देशमुखों से रोहिड़ा का क़िला छीना। इससे नाराज़ होकर आदिलशाह ने अफ़ज़लख़ाँ नामक एक प्रबल सरदार को शिवाजी के साथ युद्ध करने के लिए भेजा। अफ़ज़लख़ाँ सह्याद्रि-प्रान्त में १० वर्ष तक शासन कर चुका था। इसलिए उसे उस प्रान्त की राई-रत्ती की ख़बर थी। इस समय शिवाजी प्रतापगढ़ में था। अफ़ज़लख़ाँ का सामना करना उसके बस की बात नहीं थी। इसलिए पंताजी गोपीनाथ नाम के अपने एक वकील को भेजकर ख़ाँ साहब से कहला भेजा कि मैं आपसे मिल कर मामले को तय करने के लिए तैयार हूँ। पर भेंट एकान्त में होनी चाहिए। इस सन्देश के अनुसार प्रतापगढ़ के नीचे एक सुन्दर स्थान में दोनों की भेंट हुई। भेंट होने के समय अफ़ज़लख़ाँ ने शिवाजी को गिरफ़्तार करने का प्रयत्न किया। इस पर शिवाजी ने अपने हाथों में पहने हुए बघनखों से अफ़ज़लख़ाँ का पेट चीर डाला और वहीं उसे मार डाला। अफ़ज़लख़ाँ की फ़ौज का पीछा करके उसे तितर-बितर कर दिया (ता० २०-११-१६५९)।

अफ़ज़लख़ाँ का वध होने से बीजापुर के शाह का मन बहुत दुर्बल हो गया। शिवाजी के वैभव की वृद्धि हुई और उसका नाम भी प्रसिद्ध हो गया। अगले वर्ष अफ़ज़लख़ाँ का पुत्र फ़ाज़ल ख़ाँ व सीदी जौहर नाम के अन्य दो सरदारों ने शिवाजी को पन्हाला क़िले में घेर लिया। लेकिन रात में शिवाजी ने घेरे-वालों की फ़ौज को भेद कर विशालगढ़ की राह पकड़ी। फ़ाज़ल-ख़ाँ ने उसका पीछा किया। रास्ते में फ़ाज़लख़ाँ से शिवाजी के सरदार बाजी देशपांडे से मुठभेड़ हो गई। उसने फ़ाज़लख़ाँ को आगे न बढ़ने दिया और वहीं अपने प्राण गंवा दिये। इस

१६६१ में मुधोल के बाजी घोरपड़े पर शिवाजी ने छापा मारा और वहीं उसका अंत किया। सन १६५७ के आस पास खेम सावंत नाम के पुरुष ने अपना प्रबल पराक्रम दिखा कर बीजापुर के सुलतान के आश्रय में सावंतवाड़ी में छोटा सा राज्य स्थापित किया था। शिवाजी ने इसको जीत कर सन् १६५९ में अपने अधीन किया। लेकिन उसने फिर शिवाजी के विरुद्ध उभड़ कर युद्ध प्रारम्भ किया। इस युद्ध में भी शिवाजी ने उसे पूरी तरह से हरा दिया। संभाजी के समय में यह सावंत औरङ्गज़ेब से जा मिला था। बाद में शाहु ने उसका पक्का प्रबन्ध किया। इसकी पदवी भोंसले है। सन् १६६२ में अंजीरा के सीदी हार कर शिवाजी से मिल गये। इस प्रकार बीजापुर की ओर से लड़नेवाले सभी सरदारों की हार हो गई। इस प्रकार निरुपाय होकर बीजापुर के सुलतान ने शिवाजी के साथ सन्धि करने के लिए शाहजी को भेजा। शाहजी के पूना आने पर पिता-पुत्र का मिलाप बड़े प्रेम के साथ हुआ। शाहजी ने शिवाजी से अपने जीवन-पर्यन्त बीजापुर के राज्य को नष्ट न करने का सङ्कल्प कराया। शाहजी इसके बाद कर्नाटक लौट गये। अंजीरा के सीदी का प्रबन्ध करने के लिए दण्डाराजपुरी में शिवाजी ने एक नौसेना तैयार की और उसकी देख-भाल करने के लिए दरियासारँग और मायनाक भण्डारी नाम के दो सरदारों को मुखिया बनाया। आगे चल कर सीदी व मराठों में परस्पर अनेक युद्ध हुए। बीजापुर के साथ युद्ध करके शिवाजी को बड़े लाभ हुए। इन युद्धों में अनेक मराठे सरदार शिवाजी के पक्ष में आ गये और इससे उसने अपने राज्य की स्थापना की।

अकस्मात् छापा मारकर शायस्ताख़ाँ के लड़के को मार डाला और खिड़की से निकल कर भागते हुए शायस्ताख़ाँ की एक उँगली काट ली। दूसरी लड़ाई—पहले युद्ध में शायस्ताख़ाँ का वृत्तान्त सुन कर औरङ्गज़ेब ने यशवन्तसिंह और अपने पुत्र मुअज़्ज़म को शिवाजी पर आक्रमण करने के लिए भेजा। सन् १६६४ में शिवाजी ने मुग़लों का एक धनी नगर सूरत लूट लिया। तीसरी लड़ाई—इस घटना को सुन औरङ्गज़ेब ने जयसिंह और दिलेरख़ाँ को शिवाजी पर चढ़ाई करने के लिए भेजा। उन्होंने पूना पर धावा करने के लिए पुरन्दर के पास घेरा डाल दिया। उनकी फ़ौज बड़ी थी। शिवाजी ने देखा कि इस बड़ी फ़ौज से लड़ना कठिन है। शत्रुओं ने पुरन्दर के क़िले पर घेरा डाल दिया था। और उसमें शिवाजी का एक शूर सरदार मुरार बाजी मारा गया। यह देख शिवाजी ने जयसिंह और दिलेरख़ाँ के पास सन्धि करने के लिए कहला भेजा। यह बात जयसिंह और दिलेर ख़ाँ ने स्वीकार की। ये बातें निश्चित ठहरीं कि शिवाजी औरङ्गज़ेब से भेंट करने के लिए दिल्ली जाय और संभाजी बादशाह की मौज में नौकरी करे। यह पुरन्दर की सन्धि ता० १२-६-१६६५ के दिन हुई। इसी समय बीजापुर के राज्य से चौथ और सरदेशमुखी वसूल करने का अधिकार शिवाजी को दिया गया। सम्पूर्ण आमदनी में से चतुर्थांश भाग कर के रूप में लेने को चौथ कहते हैं और वसूलयाबी की रक़म के दशांश को सरदेशमुखी कहते हैं। इस विषय की अधिकार-सम्बन्धी बातें सातवें पाठ में दी गई हैं। इस अधिकार के मिलने से ही मराठों ने आगे चल कर अनेक प्रदेश जीते और अपना राज्य बढ़ाया।

दिल्ली की यात्रा (सन १६६६)—दिल्ली जाने में किसी

अकस्मात् छापा मारकर शायस्ताख़ाँ के लड़के को मार डाला और खिड़की से निकल कर भागते हुए शायस्ताख़ाँ की एक उँगली काट ली। **दूसरी लड़ाई**—पहले युद्ध में शायस्ताख़ाँ का वृत्तान्त सुन कर औरङ्गज़ेब ने यशवन्तसिंह और अपने पुत्र मुअज़्ज़म को शिवाजी पर आक्रमण करने के लिए भेजा। सन् १६६४ में शिवाजी ने मुग़लों का एक धनी नगर सूरत लूट लिया। **तीसरी लड़ाई**—इस घटना को सुन औरङ्गज़ेब ने जयसिंह और दिलेरख़ाँ को शिवाजी पर चढ़ाई करने के लिए भेजा। उन्होंने पूना पर धावा करने के लिए पुरन्दर के पास घेरा डाल दिया। उनकी फ़ौज बड़ी थी। शिवाजी ने देखा कि इस बड़ी फ़ौज से लड़ना कठिन है। शत्रुओं ने पुरन्दर के क़िले पर घेरा डाल दिया था। और उसमें शिवाजी का एक शूर सरदार मुरार बाजी मारा गया। यह देख शिवाजी ने जयसिंह और दिलेरख़ाँ के पास सन्धि करने के लिए कहला भेजा। यह बात जयसिंह और दिलेरख़ाँ ने स्वीकार की। ये बातें निश्चित ठहरीं कि शिवाजी औरङ्गज़ेब से भेंट करने के लिए दिल्ली जाय और संभाजी बादशाह की फ़ौज में नौकरी करे। यह पुरन्दर की सन्धि ता० १२-६-१६६५ के दिन हुई। इसी समय बीजापुर के राज्य से चौथ और सरदेशमुखी वसूल करने का अधिकार शिवाजी को दिया गया। सम्पूर्ण आमदनी में से चतुर्थांश भाग कर के रूप में लेने को चौथ कहते हैं और वसूलयाबी की रक़म के दशांश को सरदेशमुखी कहते हैं। इन विषय की अधिकार-सम्बन्धी बातें सातवें पाठ में दी गईं हैं। इस अधिकार के मिलने से ही मराठों ने आगे चल कर अनेक प्रदेश जीते और अपना राज्य बढ़ाया।

दिल्ली की यात्रा (सन १६६६)—दिल्ली जाने में किसी

तीसरा अध्याय

राज्य-स्थापन

ई० स० १६६२-१६८०

१—मुग़लों के विरुद्ध युद्ध और दिल्ली की यात्रा
२—शाहजी की मृत्यु व राज्य-स्थापन
३—बीजापुर वालों से दूसरा युद्ध
४—राज्याभिषेक
५—कर्नाटक पर आक्रमण व अन्त

१६६२-७२

(१) मुग़ल युद्ध (सन् १६६२-७२)—पहली लड़ाई—बीजापुर वालों के साथ संधि हो जाने पर सन् १६६२ में मोरोपन्त पिङ्गले व नेताजी पालकर दो सरदारों ने मुग़लों की राज्य-सीमा में धावा मारकर बड़ी लूटपाट की और क़िलों पर अपना अधिकार जमा लिया। ये घटनाएँ जब औरङ्गज़ेब के कान तक पहुँचीं तो उसने शिवाजी को वश में करने का काम शायस्ताख़ाँ को दिया। यह अमीर औरङ्गज़ेब का मामा था और उसका विश्वासपात्र भी था। इस समय शायस्ताख़ाँ दक्षिण का सूबेदार था। उसने तत्काल शिवाजी से चाकन का क़िला छीन लिया और पूने पर आक्रमण कर नगर में आकर शिवाजी के महल में ठहरा (मई

भार रक्खा गया। राजों, राजदूतों, शास्त्रियों, सरदारों, पण्डितों इत्यादि से रायगढ़ भर गया। सन् १६७४ के मृग वर्ष के आरम्भ में अभिषेकोत्सव का आरम्भ हुआ था। उस दिन यथाविधि अभिषिक्त होकर शिवाजी राजसिंहासन पर बैठा। इस उत्सव को राज्य भर में प्रसिद्ध करने के लिए (१) अभिषेक के दिन सुवर्ण तुला चढ़ाई गई, तोपें दागी गईं, दान दिये गये, पोशाकें बाँटी गईं और आशीषें दी गईं। इन सब कामों को करने के बाद शिवाजी ने राजचिह्न धारण किये। (२) राज्याभिषेक शक नाम की एक नई वर्ष-गणना शुरू की (३) "क्षत्रिय कुलावतंस शिवछत्रपति महाराज सिंहासनाधीश्वर" का पदवी उन्होंने धारण की। इसी पदवी से काग़ज़ पत्रों में उनका नाम दिया जाने लगा। (४) अष्ट प्रधानों की नियुक्ति कर राज्य की व्यवस्था की। (५) रामदास के शिष्यत्व का प्रकट करने के लिए अपनी राजकीय ध्वजा गेरुए या भगवे रंग की रँगी। इस उत्सव में ४८ लाख हूँ अर्थात् ५ करोड़ रुपये खर्च हुए थे।

इस समय ईस्ट इण्डिया कम्पनी का अङ्गरेज़ दूत रायगढ़ आया था। उसने शिवाजी के साथ व्यापारिक सन्धि की थी। अङ्गरेज़ों और पुर्त्तगीज़ों से आवश्यक बातें समझ कर शिवाजी ने अपना जहाज़ी बेड़ा तैयार किया। सिद्दियों और सीदियों पर दबाव रखने के लिए ही शिवाजी ने अपनी राजधानी किसी अन्य प्रान्त में न रख कोंकन में रायगढ़ स्थान में बनाई।

५ कर्नाटक पर आक्रमण व अन्त—राज्याभिषेक के अनन्तर [illegible] शिवाजी ने राज्य को [illegible] करने [illegible] प्रयत्न किया। [illegible] रघुनाथ नारायण हनमन्ते

भर रक्खा गया। राजों, राजदूतों, शास्त्रियों, सरदारों, पण्डितों इत्यादि से रायगढ़ भर गया। सन् १६७४ के मुख्य वर्ष के आरम्भ में अभिषेकोत्सव का आरम्भ हुआ था। उस दिन यथाविधि अभिषिक्त होकर शिवाजी राजसिंहासन पर बैठा। इस उत्सव को राज्य भर में प्रसिद्ध करने के लिए। (१) अभिषेक के दिन सुवर्ण तुला चढ़ाई गई, तोपें दागी गईं, दान दिये गये, पोशाकें बाँटी गईं और जागीरें दी गईं। इन सब कामों को करने के बाद शिवाजी ने राजचिह्न धारण किये। (२) राज्याभिषेक शक नाम की एक नई वर्ष-गणना शुरू की। (३) "क्षत्रिय कुलावतंस शिवछत्रपति महाराज सिंहासनाधीश्वर" की पदवी उन्होंने धारण की। इसी पदवी से काग़ज़ पत्रों में उनका नाम दिया जाने लगा। (४) अष्ट प्रधानों की नियुक्ति कर राज्य की व्यवस्था की। (५) रामदास के शिष्यत्व को प्रकट करने के लिए अपनी राजकीय ध्वजा गेरुए या भगवे रंग की रँगी। इस उत्सव में ५० लाख हूँन अर्थात् ५ करोड़ रुपये ख़र्च हुए थे।

इस समय ईस्ट इण्डिया कम्पनी का अङ्गरेज़ दूत रायगढ़ आया था। उसने शिवाजी के साथ व्यापारिक सन्धि की थी। अङ्गरेज़ों और पुर्तगीज़ों से आवश्यक बातें समझ कर शिवाजी ने अपना जहाज़ी बेड़ा तैयार किया। विदेशियों और सीदियों पर दबाव रखने के लिए ही शिवाजी ने अपनी राजधानी किसी अन्य प्रान्त में न रख कोंकन में रायगढ़ स्थान में बनाई।

(५) कर्नाटक पर आक्रमण व ...

अनन्तर २-३ वर्ष तक शिवाजी ने ... था।

... शिवाजी

थे। ये सहायक राज मुख्य अधिकारी की अनुपस्थिति में उनका काम देखते थे। इन प्रधानों को नियुक्त करके उनके कामों के नियम शिवाजी ने बना दिये थे। उसने इस काम में एक योग्य पुरुष की सहायता ली थी। ये सभी आदमी राज्य के आधार-स्तम्भ माने जाते थे।

(३) क़िले—सह्याद्रि के पहाड़ी देश में कोंकण के समुद्री किनारे के पूर्व की ओर मैदानों में अनेक टूटे-फूटे क़िले आज-कल दिखाई पड़ते हैं। इनमें से अनेक अर्थात् कोई तीन सौ क़िले शिवाजी ने बनवाये थे, अथवा उनकी मरम्मत करवाई थी। इन क़िलों में भोजन की सामग्री तथा बारूद और लड़ाई के हथियार सदैव भरे रहते थे। क़िले पर जाने के मार्ग बड़े कठिन थे। इस लिए बड़ी बड़ी फ़ौजों का प्रवेश ही इनमें न हो पाता था। बरसों घेरे पड़े रहते, लेकिन क़िले के रहने वाले घेरा डालने वालों की तनिक भी परवा न करते थे, और गड़बड़ का अवसर आने पर क़िले से बाहर निकल जाने को गुप्त मार्गों से रक्षित स्थान को चले जाते थे। इसलिए थोड़ी सी फ़ौज ही इन क़िलों की सहायता से राज्य की रक्षा कर लेती थी। आगे आगे चलकर अनेक विजयें इन क़िलों की सहायता से हुई। प्रत्येक क़िले की रक्षा के लिए एक हवलदार उसे सहायता देने के लिए एक ब्राह्मण सबनीस व प्रभु जाति का एक कारखानीस रहता था। ये तीनों व्यक्ति क़िले की रक्षा, क़िले के नीचे मैदानों की देख रेख, रसद पानी, गोला बारूद और मरम्मत का सामान एकत्र करते थे। ये काम इन लोगों में बटे थे। इस कार्य विभाग के कारण सब लोग अपना अपना काम यथानुरूप करते थे।

(४) फ़ौज व जहाजों बेड़े—शिवाजी की सेना के दो

भी रहते थे। बहिरर्जी नाईक नाम का चतुर महाराष्ट्र सरकार खुफ़ियों का प्रधान था। फ़ौज में नियत समय पर वेतन बाँट दिया जाता था। फ़ौज में दासी, स्त्री, कलाल इत्यादि लाने का बिलकुल निषेध था। नये आदमी की भरती के समय उसकी ज़मानत पुराने सिपाहियों में से ली जाती थी। लूट का सारा माल सरकार में जमा होता था। विशेष पराक्रम दिखलाने वाले को सरकार की ओर से बहुमान और पदवी इत्यादि देने का नियम था।

(३) फ़ौज के समान ही शिवाजी ने जहाज़ी बेड़े की भी व्यवस्था अच्छी तरह की थी। जहाज़ बनाकर उनकी सहायता से राज्य को रक्षा करने की आवश्यकता का महत्व उसे विदित था। सीदियों की शक्ति तोड़ देने के बाद पश्चिमी समुद्रतट पर शिवाजी ने अनेक क़िले बनवाये और स्थान स्थान पर जहाज़ी बेड़े तैनात किये। अलीबाग़ का क़िला कुलाबा के जहाज़ी बेड़ों का केन्द्र बनाया गया। सन् १६६५ में शिवाजी के पास ३० टन से लगा कर १५० टन तक के छोटे-बड़े कुल मिलाकर ८५ जहाज़ थे। उनमें बड़े बड़े तीन काठियों के डोल भी थे। इसके बाद छः वर्षों में ही १६० जहाज़ हो गये। समुद्री युद्ध में प्रसिद्ध होने वाला कान्होजी आँगरे शिवाजी के जहाज़ी बेड़े का मुख्य सरदार था। इसके अतिरिक्त दरिया सारंग, इब्राहीम ख़ाँ और मायनाक भंडारी शिवाजी के जहाज़ी बेड़े में समय समय पर काम कर चुके थे।

(४) राज्य-व्यवस्था—शिवाजी ने पहले की व्यवस्था में दो परिवर्तन किये थे। पहला, मालगुज़ारी की तहसील-वसूल में

अनाज न लेकर नक़द रुपये लेना शुरू किया था, और दूसरा नया प्रबन्ध यह था कि किसानों से ज़मींदारों की मर्ज़ी पर वसूल न कर अपने सरकारी आदमियों के द्वारा कर वसूल करना शुरू किया। इस काम के लिए कमाविसदार (तहसीलदार) मजमुआदार (ज़िलेदार) और सूबेदार (प्रान्त प्रधान) इत्यादि अधिकारी नियत थे। उपज का दो पंचमांश भाग कर के रूप में वसूल किया जाता था। इन्हीं अधिकारियों को फ़ौजदारी के अधिकार दिये गये थे। अलबत्ता न्याय के काम गाँव-पंचायतें करती थीं। शिवाजी के राज्य के दो मुख्य विभाग थे; स्वराज्य और मुगलाई। राज्य का वह भाग स्वराज्य के नाम से पुकारा जाता था कि जहाँ सर्व-सत्ता अधिकार शिवाजी का था। किन्तु दूसरा भाग, जहाँ का स्वामित्व दूसरे का और प्रबन्ध उसके हाथ में था वह भाग मुगलाई के नाम से प्रसिद्ध था। स्वराज्य के कुल बारह सूबे थे। प्रत्येक सूबे में दो या तीन उपभाग भी होते थे। इन उपभागों का नाम "महाल" था। शिवाजी के राज्य की कुल आय नौ करोड़ रुपये थी। प्रत्यक्ष आमदनी बहुत कम थी। सूबेदारों का वेतन ४०० होन था। क़िले के संरक्षण करने वालों, देवस्थानों, लड़ाई में पराक्रम दिखाने वालों को शिवाजी की ओर से इनाम में ज़मीन भी कभी कभी मिलती थी। उन्होंने हिन्दू या मुस्लिम देवस्थानों की आमदनी ज़ब्त नहीं की। मोटे तौर से यह कहा जा सकता है कि शिवाजी का राज्य उत्तर में ताप्ती नदी से लगाकर दक्षिण में तुंगभद्रा तक फैला था। इस राज्य-विस्तार में कहीं कहीं विच्छिन्नता भी थी। लेकिन उक्त भूभाग के उत्तमोत्तम प्रदेशों पर शिवाजी का ही अधिकार था। जिन प्रदेशों पर अधिकार न था उन पर अपना प्रभाव शिवाजी

ने अच्छी तरह जमा लिया था। इसी व्यवस्था को आगे बढ़ा कर पेशवा भी बनाये गये और कर्नाटक, गुजरात, मालवा, बरार प्रान्तों में यद्यपि छोटे भूभागों पर उन्होंने अधिकार जमाया तथापि सघन प्रदेशों को अपने अधिकार में लाने का विशेष प्रयत्न किया।

(६) उपसंहार—ऐसी व्यवस्था करके, भिन्न भिन्न विषयों में राष्ट्र की उन्नति करने के लिए शिवाजी ने अनेक उपाय किये बजाजी निम्बालकर, नेताजी पालकर इत्यादि अनेक वर्गों में त्रस्त होकर मुसलमान बन गये थे, वे पुनः प्रायश्चित करके अपने धर्म पर आरूढ़ होकर शिवाजी के साथी बन गये। शिवाजी ने व्यापार में, विद्या में, और संस्कृत भाषा व महाराष्ट्र भाषा में उन्नति करने के लिए योग दान दिया। उसने पारिभाषिक शब्दों का एक राज-व्यवहार कोष तैयार कराया। राज्य की साम्पत्तिक नीति में शिवाजी को कैसा ज्ञान था, इसका परिचय हमें उस विभाग से मिलता है, जिसके द्वारा उसने परराष्ट्रों से अपना सम्बन्ध खोला था। सरकारी काग़ज़ों से पता चलता है कि सिक्के के लिए शिवाजी ने निम्न लिखित छाप स्थिर की थी—

प्रतिपच्चन्द्र रेखेव वर्धिष्णुर्लोक वन्दिता।
शाह सूनोः शिवस्यैषा मुद्रा भद्राय राजते॥

अर्थात् शाह जी के पुत्र शिवाजी की यह मुद्रा शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा की चंद्र रेखा के समान वृद्धिकर्ता है, यह लोक कल्याणार्थ अवतरित हुई है, और इसका सब संसार वंदन करने वाला है।

शिवाजी ने भारत के राष्ट्र की जो सेवा की उसका श्रेय

यद्यपि शिवाजी को ही है, तथापि उसको इस कार्य में सहायता पहुँचानेवाले भी थे। उसके प्रसिद्ध सहायक स्वामी रामदास, जिजाबाई, दादाजी कोंडदेव, कङ्क मालसुरे, पासलकर कान्होजी जेधे और उसका पुत्र बाजी सार्जेराव मोरो पन्त पिङ्गले, निलो सोन देव, हणमन्ते, निराजी राव-जी, अण्णाजी दत्तो, दत्ताजी पन्त, वोकील, मुरार बाजी, बाजी देशपांडे, बालाजी जी आवजी, चिटणीस, फिरङ्गो जी नरसाला, नेताजी पालकर, प्रतापराव गुजर, हम्बीरराव मोहिते इत्यादि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

हैं। इस भयंकर दुश्चिंता के कारण राज्य के अनेक नर-रत्न मारे गये।

अरणाजी दत्तो—सोयराबाई के समीपी व पक्षपाती सरदार, बालाजी आवजी चिटनीस, इसका भाई श्यामजी और पुत्र आवजी, और हिरोजी फर्जंद इत्यादि लोगों को संभाजी ने हाथी के पैर से कुचलवा कर मार डाला। शिर्के सरदारों के घराने का उसने समूल नाश किया। लेकिन संभाजी की स्त्री येसूबाई बड़ी चतुर स्त्री थी। उसने संभाजी पर प्रभाव डाल कर बालाजी आवजी के दूसरे पुत्र खंडो बल्लाल को सरकारी काम पर नियत करा दिया। इसी खंडो बल्लाल ने बाद को राज्य की बड़ी बड़ी सेवाएँ कीं। संभाजी ने शिवाजी के समय के समस्त कर्मचारियों को राज्य के प्रबन्ध से अलग कर दिया और कवि कुलेश उर्फ़ "कलुशा" नाम के एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण को पहले पंडितराव का पद देकर बाद को मुख्य प्रधान का पद दिया, और उसे ही अन्य कार्य भी सौंप दिये। यह ब्राह्मण मंत्र-तंत्र तथा शास्त्र जानता था। उसने अपनी मीठी मीठी बातों से संभाजी को प्रसन्न कर लिया था।

(२) सम्भाजी के युद्ध—शाहज़ादा अकबर को संभाजी ने आश्रय दिया था, इसलिए औरंगज़ेब स्वयं एक बड़ी फ़ौज लेकर दक्षिण-देश जीतने के लिए सन् १६८३ में आया। उसने सोचा कि शिवाजी मर चुका है और संभाजी व्यसनी है। इससे महाराष्ट्र इस समय सहज में ही जीता जा सकता है। जंजीरा के सीदी और पुर्तगीज़ लोग संभाजी के साथ शत्रुता रखते थे। ऐसे कठिन अवसर पर संभाजी ने अपनी वीरता का परिचय दिया।

कोल्हापुर के मुसलमान अधिकारी छापा मार कर संभाजी को १-२-१६८९ के दिन पकड़ कर तुलापुर में बादशाह की छावनी में ले गया। इस अधिकारी का नाम मकरीबखाँ था। उस समय बादशाह ने संभाजी से मुसलमान बन जाने को कहा। संभाजी ने उत्तर देते हुए कहा कि "तुम अपनी बेटी का विवाह मेरे साथ कर दो तो मैं मुसलमान बनूं" ऐसी कड़ा कड़ी की बातें कह कर संभाजी ने मुस्लिम-धर्म की निन्दा की। यह बादशाह को सहन नहीं हुआ। इसलिए उसने संभाजी की जीभ कटवा डाली और क्रूरता के साथ उसका वध करा दिया। (११-३-१६८९) व्यसनी होने के कारण संभाजी का नाश हुआ, तथापि वह शूर और कर्त्तव्यशील था। संभाजी मार डाला गया। उस समय संभाजी की स्त्री येसूबाई और उसका पुत्र शिवाजी (इसकी उम्र ९ वर्ष की थी) रायगढ़ में थे। इनको वहीं रखकर राजाराम व अन्य सरदार बाहर निकले। इधर रायगढ़ पर घेरा डाल कर इतिकादखाँ उर्फ जुलफिकारखाँ ने ३-११-१६८९ को किला प्राप्त किया और येसूबाई तथा शिवाजी को कैद कर के साथ ले गया। शिवाजी वहाँ सत्रह वर्ष तक कैद में रहे। संभाजी के हृदय द्रावक वध ने समस्त महाराष्ट्र देश को हिला डाला। उन्होंने जोश में आकर मुगलों से बदला लेने का संकल्प किया। इधर येसूबाई और शिवाजी बादशाह के पास कैद थे। इनके साथ बादशाह की बड़ी शाहजादी जीनतुन्निसा की प्रीति हो गई। इससे उसने बड़ी सावधानी के साथ इनके सुख का सुप्रबंध रक्खा। गुप्त रीति से येसूबाई और राजाराम एक दूसरे के पास भेजते जाते थे। येसूबाई

छठा अध्याय

छत्रपति राजाराम व द्वितीय शिवाजी

सन् १६८९ १७०८

१—मराठों पर भयङ्कर सङ्कट २—सन्ताजी घोरपड़े व धनाजी जाधव
३—राजाराम की मृत्यु ४—ताराबाई व शिवाजी
५—शाहू का छुटकारा

(१) मराठों पर भयंकर संकट—मराठाशाही पर आज तक जितने संकट पड़े उन सब में यह संकट सबसे अधिक भयंकर और दुस्तर था। संभाजी के मारे जाने के बाद मराठों ने उसके बेटे को गद्दी पर बैठा कर राज्य की व्यवस्था शुरू की। राजाराम, प्रह्लाद, निराजी, रामचन्द्र, नीलकंठ अमात्य, संताजी घोरपड़े, खंडो बल्लाल, धनाजी जाधव इत्यादि पहले ही रायगढ़ से बाहर निकल गये थे, इसलिए वे शत्रु के पंजे में न फँस सके। एक एक करके मराठों के सभी किले और प्रान्त मुगलों के अधिकार में जाने लगे। उस समय ऐसा प्रतीत होने लगा कि मराठाशाही का अन्त आ गया। लेकिन इस भयङ्कर परिस्थिति ने मराठों के तेज को और भी चमका दिया। राजाराम का स्वभाव संभाजी के स्वभाव से बिलकुल भिन्न था। वह निर्व्यसनी, स्वार्थत्यागी, मिलनसार व्यक्ति था। रायगढ़ के

भी सन्ताजी मुग़ल-पक्ष में न था, धनाजी भी वैसा ही शूर था। मुग़ल तो उससे इतना भय मानते थे कि यदि किसी का घोड़ा पानी न पीता तो वे उससे पूछते कि क्यों रे पानी पीता क्यों नहीं? क्या तुझे पानी में धनाजी की परछाईं दीखती है?" संताजी ने एक बार स्वयं बादशाह के तम्बू पर हमला करके उसके सोने का कलश काट लिया था। उस समय सौभाग्यवश बादशाह अपने तम्बू में न था, इसीलिए वह बच गया। इसके बाद बादशाह की छावनी भीमा के किनारे से उठ कर ब्रह्मपुरी में आ गई। मराठों ने कर्नाटक से लगा कर खानदेश की उत्तर सीमा तक सारे देश में खलबली पैदा कर दी थी। सन् १६९१ में बादशाह की आज्ञा से ज़ुल्फ़िक़ारख़ाँ ने जिंजी के क़िले को घेर लिया। यह घेरा प्रायः छः वर्ष तक पड़ा रहा। इस क़िले के भीतर ही राजाराम और उसकी मंडली इत्यादि घिरी हुई थी। अन्त में बादशाह ने ज़ुल्फ़िक़ारख़ाँ को बड़ी सख़्त-सुस्त बातें लिख भेजीं। तब उसने जिंजी के क़िले पर अधिकार कर लिया। लेकिन क़िले पर अधिकार होने से पहले ही राजाराम अपनी मंडली के सहित सकुशल बाहर आ कर सतारा पहुँच चुका था।

(३) राजाराम की मृत्यु (सन् १७००)—राजाराम ने जिंजी से लौट कर सतारा के क़िले में महाराष्ट्र की राजधानी स्थापित की। महाराष्ट्र की यह गद्दी अन्त तक सतारे में ही रही। गद्दी स्थापित करने के बाद उसने अपने सरदारों से सम्मति लेकर मुग़लों पर चढ़ाई की। इसने [illegible] मुग़लों के [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

विश्वनाथ भट श्रीवर्धनकर की उसे पूर्ण सहायता मिली।

(२) बालाजी विश्वनाथ का उदय—बालाजी विश्वनाथ भट कोंकन में सीदियों के राज्यान्तर्गत श्रीवर्धन गाँव का देशमुख था। कई वर्षों पूर्व सकुटुम्ब देश में आकर मराठी राज्य में नौकरी करते करते सरसुबेदारी तक प्राप्त की थी। जिस समय ताराबाई और औरङ्गज़ेब का युद्ध चल रहा था, उस समय सेनापति धनाजी जाधव व बालाजी में परस्पर प्रीति हो गई थी। इससे बालाजी को मराठाशाही में होनेवाले परिवर्त्तनों का अच्छा परिज्ञान हो गया था। जब शाहू कैद से छूट कर दक्षिण पहुँचा उस समय बालाजी ने उसे अच्छी सहायता दी और इस सहायता से प्रसन्न होकर शाहू ने बालाजी को "सेनाकर्त्ता" का पद दिया। बाद को शीघ्र ही अर्थात् सन् १७०८ के जून मास में धनाजी जाधव की मृत्यु हो गई। तब उसके लड़के चन्द्रसेन को शाहू ने सेनापति बना दिया। चंद्रसेन का झुकाव ताराबाई की ओर जिस समय हुआ और वह खुल्लमखुल्ला शाहू के विरुद्ध होगया, उस समय बालाजी ने उसे भी लड़ाई में हराया। इस हार से उद्विग्न होकर चंद्रसेन ने मराठाशाही को त्याग कर मुगल-सूबेदार निज़ामुलमुल्क के पास जाकर उससे मिल गया। निज़ाम ने उसे अपने राज्य में नवीन जागीर दे दी। यह जागीर बाद को सन् १७६९ में चंद्रसेन के लड़के रामचंद्र जाधव के मरने पर सरकार में मिला ली गई। इसी प्रकार रामचन्द्र पन्त अमात्य शिवाजी के पास काम करते करते एक चतुर दरबारी हो गया था। वह ताराबाई के पक्ष में था। शाहू के पक्ष में वह कभी सम्मिलित नहीं हुआ। लेकिन ताराबाई ने उसका अपमान किया इससे उसकी स्थिति विचित्र हो गई [illegible] राजनैतिक

विश्वनाथ भट श्रीवर्धनकर की उसे पूर्ण सहायता मिली।

(२) बालाजी विश्वनाथ का उदय—बालाजी विश्वनाथ भट कोंकन में सीदियों के राज्यान्तर्गत श्रीवर्धन गाँव का देशमुख था। कई वर्षों पूर्व सह्यद्रुम्य देश में आकर मराठी राज्य में नौकरी करते करते सरन्सुबेदारी तक प्राप्त की थी। जिस समय ताराबाई और औरङ्गज़ेब का युद्ध चल रहा था, उस समय सेनापति धनाजी जाधव व बालाजी में परस्पर प्रीति हो गई थी। इससे बालाजी को मराठाशाही में होनेवाले परिवर्त्तनों का अच्छा परिज्ञान हो गया था। जब शाहू कैद से छूट कर दक्षिण पहुँचा उस समय बालाजी ने उसे अच्छी सहायता दी और इस सहायता से प्रसन्न होकर शाहू ने बालाजी को "सेना-कर्त्ता" का पद दिया। बाद को शीघ्र ही अर्थात् सन् १७०८ के जून मास में धनाजी जाधव की मृत्यु हो गई। तब उसके लड़के चन्द्रसेन को शाहू ने सेनापति बना दिया। चंद्रसेन का झुकाव ताराबाई की ओर जिस समय हुआ और वह खुल्लमखुल्ला शाहू के विरुद्ध होगया, उस समय बालाजी ने उसे भी लड़ाई में हराया। इस हार से उद्विग्न होकर चंद्रसेन ने मराठाशाही को त्याग कर मुग़ल-सूबेदार निज़ामुलमुल्क के पास जाकर उससे मिल गया। निज़ाम ने उसे अपने राज्य में नवीन जागीर दे दी। यह जागीर बाद को सन् १७६९ में चंद्रसेन के लड़के रामचंद्र जाधव के मरने पर सरकार में मिला ली गई। इसी प्रकार रामचन्द्र पन्त अमात्य शिवाजी के पास काम करते करते एक चतुर दरबारी हो गया था। वह ताराबाई के पक्ष में था। शाहू के पक्ष में वह कभी सम्मिलित नहीं हुआ। लेकिन ताराबाई ने उसका अपमान किया। इससे उसकी स्थिति विचित्र हो गई। [illegible] राजनैतिक

रंगमंच से यह एक दम विरक्त हो गया और बड़ी सावधानी से अपनी रक्षा करता हुआ राजकाज से अलग हो गया। उसने देख लिया कि अब हमारा सम्मान और आदर नहीं है। इतिहास में यही एक ऐसा सरदार दिखलाई पड़ता है। इस प्रकार सब कामों से छुट्टी पाकर इस सरदार ने राजनीति नाम की एक छोटी सी पुस्तक लिखी। यह पुस्तक अपूर्व है। सन् १६७० तक इसने राज्य का कार्य-भार सँभाला था। संभाजी के मारे जाने के बाद औरंगज़ेब से टक्कर लेकर कठिन विपन्न अवस्था में मराठाशाही की रक्षा करने का श्रेय रामचंद्र पंत को ही है। यह सरदार सन् १७३४ के लगभग मरा। इसका पुत्र भगवंतराव शाहू के समय में बहुत प्रसिद्ध हुआ है।

चंद्रसेन के उदाहरण से मराठों की परस्पर फूट का स्वभाव व्यक्त होता है। वे जितने शूर, कुशल, और पराक्रमी होते थे, उतने ही अधिक स्वार्थी, अपने मुखिया के नियंत्रण में न रहने वाले, उच्छृंखल और चाहे जिस शत्रु से मिल कर राजद्रोह करने में प्रवृत्त हो जानेवाले थे। उनके गुणों का उपयोग कर महाराष्ट्र शक्ति का विस्तार करना और उनके दुर्गुणों को दबाये रखना, इन दो मुख्य विषयों से ही पेशवाओं का आगे का इतिहास भरा हुआ है। आंगरे, दाभाड़े, रघूजी भोंसले व आगे चल कर स्वयं रघुनाथ राव पेशवा इत्यादि ने राजद्रोह किया। इसी से स्वयं अपनी शक्ति के आधार पर शिंदे, होलकर इत्यादि नवीन सरदारों की उत्पत्ति कर पेशवाओं ने अपना उद्योग जारी रक्खा।

चन्द्रसेन का राजद्रोह बालाजी ने शान्त किया, इसी प्रकार दामाजी थोरात व कृष्णराव खटावकर इत्यादि ने शाहू

के विरुद्ध दंगे किये। इन दंगों को भी पेशवा ने बड़े धैर्य और चातुर्य के साथ दबा दिया। कुलाबा का आंगरे सरदार इस समय बड़ा ज़ोर पकड़ रहा था। कान्होजी आंगरे ताराबाई का पक्ष लेकर लड़ रहा था। उसने शाहू के राज्य पर चढ़ाई कर दी और बड़ी तेज़ी से सतारा की ओर बढ़ रहा था। इसको रोकने के लिए पहले शाहू ने बहिरोपन्त पिङ्गले पेशवा को भेजा। आंगरे ने उसे हरा कर कैद कर लिया। उस समय शाहू ने निरुपाय होकर बालाजी को "अतुल पराक्रमी सेवक" समझ उसे १६-११-१७१३ को पेशवा का पद देकर आंगरे का सामना करने को भेजा। बालाजी ने आंगरे का बल प्रबल देख उसके साथ समझौता कर लिया और उसे कोंकन के कई किले देकर शाहू के पक्ष में मिला लिया (सन् १७१४)। बालाजी तथा उसके पुत्रों को अत्यंत तेजस्वी समझ कर उस कुटुम्ब को ही शाहू ने राज्य का भार सौंप दिया। छत्रपतियों की सत्ता पेशवाओं के हाथ में आने का यही एक कारण हुआ। इधर राजसबाई ने ताराबाई व उसके पुत्र शिवाजी को सन् १७१२ में कैद कर लिया और अपने पुत्र संभाजी को गद्दी पर बैठाया। शिवाजी बाद को कैद में ही मर गया (सन् १७२६)। राजसबाई व संभाजी का संबंध कोल्हापुर से था। इसलिए शाहू ने आगे चल कर वह राज्य उन्हीं को दे दिया। वही कोल्हापुर-राज्य आज भी उक्त वंश में चला आता है। इस प्रकार बड़ी सावधानी और नम्रता से इस कौटुम्बिक झगड़े का अन्त शाहू ने कर दिया। इससे उसकी प्रतिष्ठा बढ़ी।

३ मराठों का नवीन उद्योग—शाहू का पक्ष धीरे धीरे

काम को सरंजामी पद्धति कहते हैं। इसके अनुसार कार्य करने से मराठा-शक्ति का विस्तार फैला। अंगरेज़ों की तैनाती फौज की पद्धति के समान (Subsidiary System) ही यह चौथ लेने की पद्धति मराठों की थी। अंगरेज़ों ने आगे चल कर इसी पद्धति के अनुकूल "तैनाती फौज" का ख़र्च क्रम से निश्चय करके अपना सार्वभौमत्य भारत में स्थापित किया है। यह बात ध्यान में रखने योग्य है। पहले की ग्राम-संस्था और मराठों के अपने पुराने वतनों के लोभ को ध्यान में रख शाहु और बालाजी विश्वनाथ ने इस पद्धति की रचना पहले की थी। ग्राम-संस्था में बारह अलूतों और बारह बलूतों के ऊपर ग्राम का सारा कार्य-भार रहता था। इस व्यवस्था से सरकार का सम्बन्ध कर वसूल करने के अतिरिक्त प्रायः बहुत कम रहता था। देसाई अथवा देशाई अर्थात् देश का अथवा गाँव का कर एकत्र करनेवाले अधिकारी का नाम था। उसको लिखनेवाला कुलकर्णी, कर्नाटक में नाडगौडा, कह कर पुकारते हैं। १०-५ गाँवों पर शासन करनेवाला सरदेशमुख कहलाता था। इस प्रकार राज कर्मचारियों की व्यवस्था महाराष्ट्र में थी। इस प्रकार मालगुज़ारी और तहसील-वसूल का प्रबन्ध करके पहला पेशवा बालाजी विश्वनाथ २-४-१७२० को अकस्मात् मर गया। वह बुद्धिमान, नियामक और दूरदर्शी था।

बाजीराव

निज़ामुलमुल्क

मल्हारराव होलकर, राणोजी सिन्धे, उदाजी पवार, इत्यादि अनेक सरदार उसके बचपन के ही साथी थे। उनकी सहायता तथा पिलाजी जाधव, खंडेराव दाभाडे, फतहसिंह भोंसले उसी प्रकार कान्होजी आँगरे, रघुजी भोंसले, और श्रीपतिराव प्रतिनिधि शाहू के भरोसे के सरदार इत्यादि लोगों की सहायता से सम्पूर्ण देश को जीतने का उद्योग उसने प्रारम्भ किया।

२—निज़ामुल्मुल्क—मुगलों के भारत में प्रवेश करने के समय अनेक घराने भारत में विदेश से आये और यहाँ नामांकित हुए। इनमें निज़ाम का वंश प्रधान था। इस वंश के लोग बादशाह के दरबार में वज़ीर इत्यादि ऊँचे ऊँचे पदों पर थे। उन्हीं लोगों में से चिनकिलिज़ख़ाँ उर्फ़ निज़ामुल्मुल्क नामक एक पराक्रमी सरदार औरङ्गज़ेब के दरबार में उन्नति कर चुका था। सैय्यदों को निर्बल करने के लिए निज़ाम ने एक बड़ी फ़ौज तैयार की। सैय्यदों का सरदार आलमअली इस फ़ौज पर चढ़ दौड़ा। बालाजी विश्वनाथ की सन्धि के अनुसार सैय्यदों की सहायता करने के लिए खंडेराव दाभाडे मराठों की फौज लेकर गया। बरार में बालापुर नामक स्थान में निज़ाम और आलमअली की लड़ाई हुई। इस लड़ाई में आलमअली मारा गया। (सन् १७२०) इस लड़ाई में दाभाजी ने विशेष पराक्रम दिखाया था इसलिए शाहू ने उसे दाभाडे का सहायक बना कर "शमशेर बहादुर" की पदवी दी। दाभाजी से ही गायकवाड़ राजघराने की उत्पत्ति हुई है। इसके बाद दाभाजी की शीघ्र ही मृत्यु हो गई। बालापुर की लड़ाई में निज़ाम को जीत न मिली होती तो भारत का भावी इतिहास आज कुछ और ही होता।

मल्हारराव होल्कर, राणोजी सिन्धे, उदाजी पवार, इत्यादि अनेक सरदार उसके बचपन के ही साथी थे। उनकी सहायता तथा पिलाजी जाधव, खंडेराव दाभाडे, फतहसिंह भोंसले उसी प्रकार कान्होजी आँगरे, रघुजी भोंसले, और श्रीपतिराव प्रतिनिधि शाहू के भरोसे के सरदार इत्यादि लोगों की सहायता से सम्पूर्ण देश को जीतने का उद्योग उसने प्रारम्भ किया।

२—निज़ामुल्मुल्क—मुग़लों के भारत में प्रवेश करने के समय अनेक घराने भारत में विदेश से आये और यहाँ नामाङ्कित हुए। इनमें निज़ाम का वंश प्रधान था। इस वंश के लोग बादशाह के दरबार में वज़ीर इत्यादि ऊँचे ऊँचे पदों पर थे। उन्हीं लोगों में से चिनकिलिज़खाँ उर्फ़ निज़ामुल्मुल्क नामक एक पराक्रमी सरदार औरङ्गज़ेब के दरबार में उन्नति कर चुका था। सैय्यदों को निर्बल करने के लिए निज़ाम ने एक बड़ी फ़ौज तैयार की। सैय्यदों का सरदार आलमअली इस फ़ौज पर चढ़ दौड़ा। बालाजी विश्वनाथ की सन्धि के अनुसार सैय्यदों की सहायता करने के लिए खंडेराव दाभाडे मराठों की फ़ौज लेकर गया। बराड़ में बालापुर नामक स्थान में निज़ाम और आलमअली की लड़ाई हुई। इस लड़ाई में आलमअली मारा गया। (सन् १७२०)। इस लड़ाई में दामाजी ने विशेष पराक्रम दिखाया था इसलिए शाहू ने उसे दाभाडे का सहायक बना कर "शमशेर बहादुर" की पदवी दी। दामाजी से ही गायकवाड़ राजघराने की उत्पत्ति हुई है। इसके बाद दामाजी की शीघ्र ही मृत्यु हो गई। बालापुर की लड़ाई में निज़ाम को जीत न मिली होती तो भारत का भावी इतिहास आज कुछ और ही होता।

मैजों की मुठभेड़ भोपाल के समीप हुई। इस लड़ाई में घोर युद्ध के बाद निज़ाम की बुरी तरह की हार हुई। यह हार सन् १७३८ में ८ जनवरी को हुई। इसमें अनेक वीरों के मारे जाने से निज़ाम शिथिल होकर बैठ रहा।

(३) **मराठाशाही का विस्तार**—बाजीराव के समय के मराठे सरदार सारे भारत में विजय प्राप्त करने लगे। भिन्न भिन्न प्रान्तों पर अधिकार जमाने का काम भिन्न भिन्न सरदारों को बाँट दिया गया, और वे स्थान स्थान पर जाकर सदैव के लिए बस गये। शाहू ने उन्हें बहुमान और जागीर देकर इस कार्य के लिए प्रोत्साहित किया। ख़लिशा बहादुर, सेना साहेब सूबा, शमशेर बहादुर, सर लश्कर इत्यादि आकर्षक पद-वियाँ मराठे सरदारों को शाहू के समय में मिलीं। सिंधे उत्तर-भारत में जा बसा, मालवे में होल्कर और पँवार की नियुक्ति हुई। वहाँ के राजा गिरधर और मुहम्मदख़ाँ बंगश को हरा कर यह प्रान्त मराठों ने ले लिया। बुंदेलखंड में छत्रसाल की सहायता कर बाजीराव ने वहाँ बहुत सी भूमि अपने अधि-कार में की। नागपुर को भोसलों ने अपना घर बनाया। गुजरात में सेनापति दाभाडे तथा उनके सहायक गायकवाड़ रहने लगे। उन लोगों ने बादशाह के सूबेदार सर बुलन्दख़ाँ और मारवाड़ के राजा अभयसिंह को परास्त किया। कोंकन में आँगरे रहता ही था। दक्षिण में कर्नाटक-प्रान्त को रघुजी भोंसले ने अपने अधिकार में किया। दक्षिण-महाराष्ट्र में आगे चल कर पटवर्धनों की शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ और स्वतः

दिया था। इस स्थान पर राजसबाई का लड़का राज्य करता था। इसका नाम सम्भाजी था। यह निज़ाम से जा मिला। तब शाहू ने उससे लड़ने के लिए प्रतिनिधि को भेजा। इस युद्ध में प्रतिनिधि से यह हार गया। उसे भेंट करने के लिए बुलाकर उसने उससे संधि करके कोल्हापुर के स्वतंत्र राज्य का दान-पत्र दिया। यही संभाजी कोल्हापुर के वर्त्तमान छत्रपति राजवंश का आदि-पुरुष था (सन् १७३१)।

मराठाशक्ति के कितने ही पुराने सरदार पेशवाओं के विरुद्ध थे। उन्हें पेशवा का शासन रुचिकर न था। अवसर पाकर वे पेशवा के शत्रुओं से मिल जाते थे। सेनापति खंडेराव दाभाड़े के सन् १७२९ में मरने के बाद उसका लड़का त्रिंबकराव दाभाड़े गुप्तरीति से निज़ाम के साथ लिखा-पढ़ी करके पेशवाओं का पतन करने का उद्योग कर रहा था। इसलिए बाजीराव ने उस पर चढ़ाई करके गुजरात में डभई नामक स्थान में उसको पराभूत किया। उस लड़ाई में त्रिंबकराव मारा गया (१-४-१७३१)। उसका भाई पराक्रमी न था, इसलिए गुजरात का कार्य दाभाड़े के सहायक पिलाजी गायकवाड़ को दिया गया। उसके वंशज बड़ौदा के गायकवाड़ हुए। सन् १७३३ में बाजीराव ने कोंकन पर चढ़ाई कर जंजीरा के सीदियों का अंत कर दिया।

निज़ामुल्मुल्क ने बाजीराव के साथ फिर छेड़छाड़ शुरू की। दिल्ली से सहायता पाकर वह मराठों का पतन करना चाहता था। बाजीराव ने ठेठ दिल्ली तक चढ़ाई करके बादशाह को हरा दिया। यह बात निज़ाम न सह सका, इसलिए उसने बाजीराव से लड़ाई ठानने के लिए फौजें भेजीं। इन दोनों

फ़ौजों की मुठभेड़ भोपाल के समीप हुई। इस लड़ाई में घोर युद्ध के बाद निज़ाम को बुरी तरह की हार हुई। यह हार सन् १७३८ में ८ जनवरी को हुई। इसमें अनेक वीरों के मारे जाने से निज़ाम शिथिल होकर बैठ रहा।

(३) **मराठाशाही का विस्तार**—बाजीराव के समय में मराठे सरदार सारे भारत में विजय प्राप्त करने लगे। भिन्न भिन्न प्रान्तों पर अधिकार जमाने का काम भिन्न भिन्न सरदारों को बाँट दिया गया, और वे स्थान स्थान पर जाकर संरक्षण के लिए बस गये। शाहू ने उन्हें बहुमान और आशीर्वाद देकर इस कार्य के लिए प्रोत्साहित किया। [illegible] बहादुर, सेना साहिब सूबा, शमशेर बहादुर, सर लश्कर इत्यादि आदरणीय पदवियाँ मराठे सरदारों को शाहू के समय में मिलीं। सिंधे उत्तर भारत में जा बसा, मालवे में होल्कर और पँवार की नियुक्ति हुई। वहाँ के राजा गिरधर और मुहम्मदखाँ बंगश को हरा कर यह प्रान्त मराठों ने ले लिया। बुंदेलखंड में छत्रसाल की सहायता कर बाजीराव ने वहाँ बहुत सी भूमि अपने अधिकार में की। नागपुर को भोसलों ने अपना घर बनाया। गुजरात में सेनापति दाभाडे तथा उनके सहायक गायकवाड़ रहने लगे। उन लोगों ने बादशाह के सूबेदार सर बुलंदखाँ और मारवाड़ के राजा अभयसिंह को परास्त किया। कोंकण में आँगरे रहता ही था। दक्षिण में कर्नाटक [illegible] को रघुजी भोंसले ने अपने अधिकार में किया। दक्षिण महाराष्ट्र में आगे चल कर पटवर्धनों की शक्ति का उदय हुआ और [illegible]

ने नागपुर व ठेठ बंगाल तक का देश अपने अधिकार में किया था।

पेशवा नाना साहब पर शाहू का पुत्रवत् स्नेह था। जिस समय उसे पेशवाई मिली उस समय उसकी अवस्था केवल १८ वर्ष की थी। शीघ्र ही बाजीराव और चिम्माजी अप्पा के द्वारा किये गये उद्योग को सफल करने का नाना साहब ने संकल्प किया। वह स्वभाव से गम्भीर, लिखने में कुशल, व्यवहार में चतुर और बातचीत में दूसरे पर प्रभाव डालनेवाला था। उसने कोल्हापुर के महाराज सम्भाजी के साथ मैत्री कर ली थी। निज़ाम से मिलकर उसने उसे अपना लिया था। उत्तर-भारत में बुन्देलखंड, प्रयाग, काशी, गया, मुर्शिदाबाद तक आक्रमण कर उन प्रान्तों में मराठों की धाक जमा दी थी। दिल्ली के बादशाह से मालवा की सूबेदारी मराठों के लिए लिखा ली थी। पहले रघुजी भोंसले पेशवों के बहुत विरुद्ध रहता था। इसीलिए नाना साहब ने युद्ध में शाहू के द्वारा उसका गर्व नष्ट करा के उसके साथ सन्धि करके स्नेह स्थापित किया। प्रतिनिधि और आँगरे भी पेशवा के विरुद्ध थे। इनमें से प्रतिनिधि के हाथ में कोई सत्ता न थी। सन् १७५६ में नाना साहब ने अंगरेज़ों की सहायता लेकर आँगरे को हराया। अंगरेज़ों ने बम्बई-द्वीप लेकर उस पर अपनी बस्ती बसाई थी। पेशवों ने पुर्त्तगीज़ों का नाश करके पश्चिमी किनारे पर अंगरेज़ों का एक शत्रु कम कर दिया था और नाना साहब ने अंगरेज़ों को सहायता देकर आँगरे का पतन किया। इससे पश्चिमी किनारे पर अंगरेज़ों को कोई रोक-टोक करनेवाला न रहा। अपने जहाज़ी बेड़े को स्वयं ही डुबाना पेशवा की बड़ी भारी भूल थी।

(४) शाहू की मृत्यु—[illegible] १७४९ को शाहू महाराज की मृत्यु हुई। इस राजा का बड़ा लम्बा शासन रहा। बचपन आठ वर्ष की अवस्था में अपनी माता के साथ बादशाह की कैद में रहा। वहीं से पच्चीसवें वर्ष में उसका छुटकारा हुआ। इसके बाद ४२ वर्ष तक शान्ति और न्याय के साथ शासन करके उसने राष्ट्र का प्रेम सम्पादित किया। सभी सरदार और प्रजाजन उस पर श्रद्धा रखते थे और उसकी आज्ञा का पालन करते थे। उसी के शासन काल में मराठों का डेरा के सभी प्रान्तों में फैला हुआ। लेकिन उसने शासन की कोई निश्चयात्मक व्यवस्था नहीं की। तो भी उसने अपने भोले और पवित्र व्यवहार से राष्ट्रनिष्ठ के चित्त पर एक सी छाप लगा कर सब जातियों व सब पंथों के लोगों के सामने उद्योग करने के लिए नवीन क्षेत्र खड़ा कर दिया था। महाराष्ट्र में अनेक घरानों का उदय इसी शाहू के शासन-काल में हुआ था। शाहू के कोई सन्तान न थी। इसलिए ताराबाई के नाती रामराजा को गद्दी पर बैठाने और पेशवा को राज-काज करने की आज्ञा देकर वह मरा था। इस आज्ञा के अनुसार ताराबाई की सम्मति लेकर नाना साहब ने रामराजा को लाकर सतारा की गद्दी पर बैठाया। परन्तु रामराजा निर्बल था। उसको गद्दी पर बैठाकर ताराबाई शासन की सारी सत्ता अपने हाथ में लेना चाहती थी। इसलिए उसने पेशवा की नहीं पटी। यही कारण है कि उसने पेशवा के हाथ से सारी सत्ता छीन लेने के अभिप्राय से दमाजी गायकवाड़ को गुजरात से फौज लेकर बुलाया। दमाजी ने आकर बड़ा गड़बड़ मचा दिया परन्तु पेशवा ने उसको नीचा दिखाकर कैद कर लिया और उससे आधा गुजरात देने की प्रतिज्ञा लिखा ली। [illegible] में पेशवा

ने सतारा छोड़कर पूना में ही अपना सारा कार्य शुरू किया और प्रतिनिधि, सचिव इत्यादि मंडली के साथ स्वतंत्र संधि कर के ताराबाई हार कर बैठ रही। उधर ताराबाई ने रामराजा को सतारा के क़िले में सख़्त क़ैद कर पेशवा के साथ विरोध खड़ा किया। किन्तु इस विरोध का कुछ फल न हुआ और वह सन् १७६१ में ९ नवम्बर को मर गई। रामराजा को वास्तव में ताराबाई के नाती न होने की बात पीछे प्रकट हुई। इससे मराठों में बड़ा प्रपंच उठ खड़ा हुआ। उसमें चतुरता भी न थी। और इधर राजवंश के साथ कृत्रिम सम्बन्ध खुलने से छत्रपति के राज्य का विलक्षण उत्तरदायित्व भी आ पड़ा। इसमें कोल्हापुर और सतारा दोनों के ही राज्य का क्षय हुआ।

पेशवे पूने में रहने लगे। इससे सतारा का महत्त्व कम होकर पूना ही आगे मराठा राज्य की राजधानी बना। भिन्न भिन्न सरदारों के एक होकर एक साथ उद्योग करने की पद्धति शिवाजी ने चलाई थी। लेकिन बादशाह के आक्रमण के समय से इस पद्धति का नाश हो गया और एक दूसरे से अलग रह कर उद्योग करने वाले, सरंजामी सरदार बन कर वे अपने अपने स्वार्थ की पूर्ति करने लगे। उनको एक सूत्र में बाँधने का काम शाहू ने केवल अपने प्रभाव से थोड़ा-बहुत किया था। उसकी मृत्यु ने यह एक बन्धन भी तोड़ दिया। इससे मराठा मंडल में फूट फैल गई। इस फूट को दूर करने का प्रयत्न कुछ समय तक पेशवों ने किया, लेकिन अब उन्हीं के घर में कलह उठ खड़ी हुई तब अन्त में राज्य का नाश हो गया।

नवाँ अध्याय

छत्रपति रामराजा, पेशवा नाना साहब

सन् १७५०-१७६१

१—राज्य-विस्तार के दो विभाग २—उत्तर-भारत में [illegible] का अधिकार
३—दत्ताजी सिंधिया का वध ४—पानीपत का भीषण संग्राम

(१) राज्य-विस्तार के दो विभाग—मराठों का राज्य उत्तर-भारत और दक्षिण-भारत दोनों ही देशों में फैल रहा था। इनमें से दक्षिण-भारत में महाराष्ट्र-शक्ति के विस्तार करने का कार्य शाहू ने कोल्हापुर के संभाजी को सौंप दिया था और उत्तर-भारत में महाराष्ट्र-शक्ति के विस्तार का भार स्वयं शाहू ने अपने हाथ में लिया था। किन्तु जिस प्रकार शाहू ने नवीन सरदारों को जमाकर ज़ोरों के साथ उत्तर-भारत में महाराष्ट्र-शक्ति की स्थापना करने का कार्य किया था, वैसे ही उत्साह के साथ दक्षिण-भारत में संभाजी ने कोई काम न किया। दक्षिण में तंजौर भोसलों का छोटा सा राज्य शाहजी के समय से ही अनेक शत्रुओं से अपनी रक्षा करता हुआ निर्वाह कर रहा था। उसकी रक्षा और शिवाजी-द्वारा जीते हुए भूभाग की रक्षा करने के लिए शाहू ने ५ आक्रमण करवाये थे। इस ओर के कार्य को जारी रखने के लिए शाहू की मृत्यु के बाद नाना साहब ने भी ध्यान दिया और

अपने ऊपर ले लेंगे। उत्तर में अब्दाली और दक्षिण में मराठे दोनों ओर से शत्रुओं का भय दिल्ली के बादशाह को सदैव बना रहता था। दोनों ओर से भय-ग्रस्त होने के कारण बादशाह को अपनी रक्षा का उपाय सोचना पड़ा। नादिरशाह-द्वारा की गई दिल्ली की लूट की पुनरावृत्ति रोकने के लिए बादशाह ने यह निश्चय किया कि अहमदशाह अब्दाली के आक्रमणों को रोकने के लिए मराठों से मेल किया जाय। उसके वज़ीर ग़ाज़ीउद्दीन का मराठों से मेल था। उसके परामर्श से बादशाह ने सिन्धिया और होल्कर को बुलाकर उनके साथ सन् १७०८ में सन्धि कर सिन्धु-पर्यन्त प्रान्तों की चौथ और सरदेश-मुखी वसूल करने का अधिकार उनको दे दिया। और इसके बदले में सिन्धिया और होल्कर ने बादशाह के दुश्मन अब्दाली और रुहेलों का प्रबन्ध करने का भार अपने ऊपर ले लिया। वास्तव में अटक से प्रयाग-काशी तक के प्रदेश को सुरक्षित रखने का काम बहुत बड़ा होने के कारण उन्हें नहीं सौंपा गया था, क्योंकि इस काम के लिए धन और फौज की अधिक आवश्यकता थी। यह सन्धि जयाप्पा सिन्धे और मल्हारराव होल्कर ने पेशवा के नाम लिखाई थी। इस समय दिल्ली के बादशाह के दरबार में दो पक्ष थे। एक पक्ष ग़ाज़ीउद्दीन और मराठों का था। इसका मत था कि भारतीय लोग एक होकर विदेशियों के आक्रमणों से भारत की रक्षा करें। दूसरे पक्ष में रुहेले व अन्य मुसलमान सरदार थे। ये लोग यह चाहते थे कि सब मुसलमान एकत्र होकर हिन्दुओं से दिल्ली की रक्षा करें, इस काम में विदेशी मुसलमानों की सहायता भी यदि लेनी पड़े तो कोई हानि नहीं। दिल्ली के मुसलमानों को मराठों का इस प्रकार दिल्ली के बादशाह से मिल जाना अच्छा न

मय। कुम्हेरी पर घेरा डालते समय मल्हारराव का लड़का प्रसिद्ध अहिल्याबाई का पति खण्डेराव होलकर १७२३-१७५४ को गोली लगने से मर गया। इससे होलकर अत्यधिक चिढ़ गया। इसमें जवाहर रुष्ट कर मारवाड़ की ओर चला गया। यहाँ राजपूतों ने नागौर में उसे मार डाला (२०-९-१७५५)।

इधर नजीबुद्दौला ये सब बातें अब्दाली को अच्छी तरह बतला कर भारत पर उसे चढ़ा लाया। उसने आकर दिल्ली पर सन् १७५७ में अधिकार जमा लिया। इस प्रकार दिल्ली लेकर वह दक्षिण की ओर बढ़ा और उसने मथुरा के हिन्दू देवालय को नष्ट कर दिया और उसे लूटा। इसी समय उसने दिल्ली को अपने अधिकार में रखने का पक्का प्रबन्ध करना चाहा, लेकिन उसकी फौज में महामारी फैल जाने से उसके सिपाही अफगानिस्तान को लौटने लगे।

अब्दाली का प्रबन्ध करने के लिए फिर भी रघुनाथराव को ही पेशवा ने दिल्ली भेजा। उसके दिल्ली पहुँचने तक अहमद शाह दिल्ली से निकल गया था। रघुनाथराव ने दिल्ली का प्रबंध कर पञ्जाब पर चढ़ाई की। पञ्जाब की रक्षा उस समय अहमद शाह अब्दाली का लड़का तैमूरशाह कर रहा था। उसको भी मराठों ने मार भगाया और अटक तक उसका पीछा करके सिन्धु नदी का पानी दक्षिण के घोड़ों को पिलाया। (सन् १७५८)। यहाँ मराठों के उत्कर्ष की सीमा का अन्त हुआ। मराठों का झंडा अटक पर फहरा गया। नजीबउद्दौला इत्यादि मुसलमान सरदारों को मराठों की यह विजय बेतरह खटकी। पञ्जाब का पक्का प्रबन्ध किये बिना ही रघुनाथराव [illegible] लौट पड़ा। यहाँ के [illegible] का कार्य उसने [illegible]

काम में होल्कर ने दत्ताजी की सहायता न की। स्थान स्थान पर मराठों की छोटी छोटी फौजें थीं। उनमें ऐक्य न होने से उनकी स्थिति शिथिल हो गई। इस स्थिति का ठीक ठीक अनुमान नाना साहब पेशवा को न हो पाया। स्वयं तो कभी उत्तर भारत में उसने पैर रक्खे न थे। इसी से वहाँ गड़बड़ और अव्यवस्था फैल गई और अब्दाली व नजीबखाँ का बल बढ़ने लगा।

(३) दत्ताजी सिन्धिया का वध (१०-१०-१७६०)— नजीबखाँ की मंत्रणा से प्रेरित होकर अहमदशाह अब्दाली सन् १७५९ के अन्त में पञ्जाब पर चढ़ दौड़ा और वहाँ से मराठों की फौजों को भगा कर सीधा दुआब में पहुँचकर दत्ताजी सिन्धिया पर वार करने लगा। उस समय मल्हारराव होल्कर जयपुर के समीप था। इसलिए कुछ समय ठहरकर अपना बचाव न करके दत्ताजी ने एकाएक अब्दाली का सामना करने का निश्चय किया। उसका नाती जयाप्पा का लड़का जनकोजी भी उसके साथ था। इसके सिवा सिन्धिया के साथ अन्य अनेक सूर्मांर भी थे, जो सिन्धिया के लिए प्राण त्याग करने में हिचकते न थे। उसने मल्हारराव को अपनी फौज लाने के लिए लिखा और स्वयं अब्दाली का सामना करने को निकला। थोड़े दिनों के बाद सिन्धिया और अब्दाली इन दोनों का सामना हुआ। यमुना के तट पर दिल्ली के समीप एक तट पर सिन्धिया और दूसरे तट पर अब्दाली का पड़ाव पड़ा। १० जनवरी सन् १७६० को अब्दाली और नजीबखाँ की फौजें यमुना पारकर दत्ताजी पर आक्रमण करने लगीं। उस समय दत्ताजी उनको रोकने के लिए गया था, अतः नदी में ही दोनों फौजों का आमना सामना हुआ और लड़ाई शुरु हुई। इसमें दत्ताजी जख्मी होकर गिर पड़ा उसी समय शत्रु ने उसका सिर काट लिया। जनकोजी के हाथ

से गोली लग जाने से वह भी गिर पड़ा, लेकिन उसे लोगों ने घोड़े पर सवार कराकर भगा दिया। इस तरह सिन्धिया की पीछे हटी हुई फौज होल्कर से आ मिली। कुछ दिनों आराम करके फिर सिन्धे और होल्कर की फौजों ने मिलकर दुआब पर अधिकार किया। किन्तु वहां सफलता न मिलने से ये सभी फौजें चंबल के दक्षिणी तट पर आ गईं। इस प्रकार अब्दाली ने मराठों का इतने दिनों का किया हुआ उद्योग निष्फल कर दिया और इस समय स्वदेश वापस न जाकर वह दिल्ली के उस पार नालागढ़ के पास दुआब में अपना डेरा डालकर बैठ गया।

(४) पानीपत का भीषण संग्राम। (सन् १७६१)—

ये समाचार नाना साहब पेशवा के पास पहुँचे। उस समय उनके स्वयं अहमदनगर में रहने के कारण उनकी फौजें निज़ाम पर चढ़ाई कर रही थीं। इन फौजों का आधिपत्य सदाशिवराव को दिया गया था और पेशवा का बड़ा लड़का विश्वासराव भी निज़ाम से लड़ रहा था। इब्राहीम ख़ाँ गार्दी* इत्यादि तोपख़ाना चलानेवाले शूर सरदार सदाशिवराव के साथ थे। इन सबों ने उद्गीर

* गार्दी अर्थात् गार्ड, पश्चिमी कवायद सीखे हुए पैदल सिपाही। बहुधा उत्तर के पठान और पुरबिया इत्यादि जाति के लोग थे। इनमें मराठे न थे। हथियार, बन्दूक और वेतन ८) से १५) प्रतिमास। प्रथम सेनापति बुसी ने ये पलटनें पहले महाराष्ट्र में तैयार की थीं और इन्हें तोपखाने का भी काम सिखाया था। इस विषय में पेशवा ने अपने निज के आदमी तैयार न कर बुसी के सिखाये मुजफ्फरखाँ इब्राहीमखाँ इत्यादि को अपनी नौकरी में रख लिया था। वे सारे के सारे काम करनेवाले सिपाही पैसे के लिए अनेक साहस के काम करते थे। एक बार मुजफ्फरखाँ ने सदाशिवराव को मार डालने का भी प्रयत्न किया था।

में निज़ाम को परास्त किया और उसका ६० लाख का भूभाग छीन लिया। लेकिन साथ ही दत्ताजी के मारे जाने का समाचार सुन सदाशिवराव सीधा उत्तरभारत की ओर चल पड़ा और पटदूर में पेशवा से मिल गया। यहाँ पेशवा ने सदाशिवराव और विश्वासराव को फौजें, सरंजाम और इब्राहीमख़ाँ को तोपख़ाना देकर सन् १७६० का बदला लेने के लिए अब्दाली के विरुद्ध भेजा। सदाशिवराव पक्का, निस्पृह, हिसाब और व्यवहार में जल्दबाज़ी करने वाला और सब से ज़बरदस्ती काम लेने में चतुर था। केवल उसका स्वभाव हठी था। अपने ऊपर आई विपत्ति का ठीक ठीक अनुमान न करने की कमी उसमें थी। सेनापति के काम में वह अब्दाली के बराबर न था, तो भी महाराष्ट्र में उसकी योग्यता का अन्य आदमी न मिलने के कारण पेशवा ने फौजों का मुख्याधिकार उसी को सौंपा था। उसके साथ मराठों के बड़े बड़े सरदार भी थे। वर्षाकाल में ही मराठों की फ़ौजों ने दिल्ली पर अधिकार जमा लिया। अहमदशाह की फौजें यमुना के उस पार छावनी डाले पड़ी थीं। परन्तु नदी को पारकर अब्दाली पर मराठों ने आक्रमण न किया। इसलिए यमुना के किनारे किनारे उत्तर की ओर जाकर उन्होंने कुञ्जपुरा में अब्दाली के मुख्य मोर्चे को ले लिया। यह स्थान कुरुक्षेत्र के समीप था। इसके बाद ही अब्दाली को बागपत के समीप यमुना पार करने की सुविधा मिलने से उसने अपनी फौजें यमुना के इस पार दिल्ली की ओर उतार दीं और अपनी फ़ौजों को मराठों के दक्षिण की ओर ले आया। इससे सदाशिवराव का दिल्ली का पाया टूट गया। यहाँ से थोड़ी दूर लौटकर इब्राहीम की सलाह से सदाशिवराव ने पानीपत गाँव के पास

मोर्चाबंदी की। उनकी इच्छा थी कि अब्दाली को भूखों मारकर स्वयं उसका संहार करें। लेकिन रुहेले आदि अब्दाली के साथ थे, इसलिए अब्दाली ने मराठों की उपेक्षा की। दो-अढ़ाई मास तक दोनों दल मोर्चाबंदी किये एक दूसरे के सामने पड़े रहे। इस बीच में कई छोटी-मोटी लड़ाइयाँ हुईं, जिनमें बलवन्तराव मेहेंदले, गोविन्द पंत बुन्देले इत्यादि सरदार मारे गये। चारे का अन्न इत्यादि आना बन्द हो जाने से भी मराठे निरुपाय हो गये। तब १४ जनवरी सन् १७६१ को मराठी सेनाओं ने अब्दाली पर चढ़ाई की। दोपहर तक तुमुल युद्ध हुआ, तीसरे पहर विश्वासराव हाथी पर सवार होकर निकला। वह गोली लगने से तत्काल मर गया। तब सदाशिवराव का धैर्य जाता रहा और वह लड़ाई में स्वयं घुस पड़ा। उस समय सर्वत्र गड़बड़ फैल गया और मराठों का संहार हुआ। सदाशिव-राव, जनकोजी सिन्धे, यशवंतराव पवार, इब्राहीमखाँ गार्दी, शमशेर बहादुर इत्यादि अनेक नामांकित सरदार मारे गये। मल्हारराव होल्कर, दामाजी गायकवाड़, महादजी सिंधिया, नाना फड़नवीस इत्यादि कुछ गिनती के सरदार बचकर लौट पाये।

पानीपत के इस लोमहर्षण काण्ड से महाराष्ट्र में बड़ा आतंक फैल गया। सभी कार्यकर्त्ताओं की एक सम्पूर्ण पीढ़ी काट डाली गई। पेशवा नाना साहब और फ़ौज लेकर ग्वालियर तक पहुँच पाया था कि पानीपत के इस पराजय का समाचार उसे मिला। यदि उस समय लड़ाई से बचे हुए लोग दिल्ली में ही ठहरे रहते तो पेशवा के साथ आई हुई सेना की सहायता से मराठों का कार्य सिद्ध हो गया होता, क्योंकि अब्दाली की भी फ़ौज इस युद्ध में खप चुकी थी और भारी हानि उठा चुकी थी।

१७६८ में नासिक के समीप धोड़प किले के पास लड़ाई हुई। इस लड़ाई में माधवराव ने रघुनाथराव को कैद कर पूने में शनिवार वाड़े में अच्छा प्रबंध करके रक्खा। यह कैद सिर्फ बाहर की राजनीति से रघुनाथराव को अलग रखने के लिए थी। इस प्रकार रघुनाथराव को ठीक ठिकाने बैठाकर माधवराव राज-कार्य निर्विघ्न चलाने लगा। कैद में भी रहकर अनेक प्रकार की कार्यवाइयाँ करने में रघुनाथराव ने कमी न की।

(३) बादशाही की दिल्ली में स्थापना—आगे के चार वर्षों में माधवराव का उद्योग निर्विघ्न रूप में बड़ी शीघ्रता से सफल होने लगा। नागपुर के भोंसले बहुधा मराठा-शक्ति के उद्योग में सम्मिलित न होकर अपनी स्वतंत्रता जताते थे और मराठों के शत्रुओं से मिलकर हानि पहुँचाते थे। इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए माधवराव ने नागपुर पर आक्रमण करके जानोजी भोंसले का अहंकार ढीला किया और कनकापुर में उसके साथ संधि कर आगे के उद्योग का मार्ग निश्चित किया। यह संधि माधवराव की कार्य कुशलता का द्योतक है। भोंसले पर गई हुई फौजें वहीं से सीधी उत्तर-भारत की ओर चली गईं। इन फौजों के साथ माधवराव ने चार मुख्य सरदार भेजे थे। इनके नाम महादजी सिंधिया, तुकोजी होल्कर, रामचन्द्र गणेश कानड़े, और विसाजी कृष्ण बिनीवाले थे। इन सरदारों को आदेश दिया गया था कि वे उत्तर-भारत में मराठों का शासन पूर्णरूप से स्थिर करके बादशाह शाहआलम को लाकर दिल्ली की मसनद पर फिर बैठा दें और उससे पूर्व की प्रतिज्ञाएँ पूर्ण कराई जायँ। बड़ी मेहनत और ३ वर्ष के लगातार परिश्रम के बाद

नाना फड़नवीस

महादा जी सिंधिया
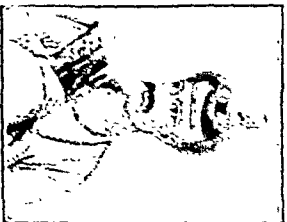
इन सरदारों के दब जाने पर अपना अधिकार किये। सन् १७७१ के अन्त में बादशाह को दिल्ली लाकर सिंहासन पर बैठा दिया और इस प्रकार पानीपत के पश्चात् अधूरा रहा हुआ काम पूरा करने के श्रेय अंश में माधवराव का यश फैल गया। महाराष्ट्रीय इत्यादि विद्रोही सरदारों के दमन का उनके द्वारा की गई हानि का पूरा पूरा प्रतिशोध लिया गया। इसमें सिंधिया के वध का प्रतिशोध लेने पर महादजी सिंधिया को पूरा पूरा संतोष हुआ। इसी से महादजी का नाम मराठा-पुनरुत्थान में इतना अधिक प्रसिद्ध हुआ।

इसके अतिरिक्त माधवराव ने अपनी छोटी उमर में ही हैदर को परास्त किया। उसने निज़ाम के साथ मेल किया। नागपुर के भोंसलों को मराठों के उद्योग में सम्मिलित किया। इसी रीति से प्रारंभ से चलाये गये हिन्दू-पद-पादशाही के उद्देश में उसने सर्वोत्तम सफलता प्राप्त की। इस कार्य को करने के लिए माधवराव के समय में अनेक नवीन कार्यकर्ता तैयार हुए। उस समय के कार्यकर्ताओं में सखाराम बापू, मोरोबा दादा, नानाफड़नवीस, गोविंद शिवराम खासगी-वाले, मालजी फाकडे, सखाराम हरि गुप्ते, महादजी वल्लाल, तुकोजी गोपालराव पटवर्धन, भिमो विट्ठल, गंगाधर यशवंत विशेष प्रसिद्ध हैं। इन्हीं लोगों के कारण पानीपत में मारे गये नेताओं का अभाव लोगों को नहीं खला। माधवराव के उद्योग का यह परिणाम था।

(४) माधवराव की अकाल-मृत्यु—माधवराव का शरीर दुर्बल था। इसलिए इस प्रकार सदा की कड़ी मेहनत का असर पड़ने

में उसे क्षय रोग ने धर पकड़ा। धीरे धीरे यह व्याधि प्रबल होती गई और २८ वर्ष की अल्पावस्था में थेउर ग्राम में १८ नवम्बर सन् १७७२ को उसकी मृत्यु हो गई। उस समय उसकी स्त्री रमाबाई उसके साथ सती हो गई। उसकी माँ गोपिकाबाई पहले से ही नासिक के समीप गङ्गापुर में तीर्थवास करती थी, उसने फिर कभी पूना नहीं देखा। माधवराव के कोई लड़का न था। नारायणराव उसका छोटा भाई सत्रह वर्ष का था। माधवराव ने पेशवाई वस्त्र नारायणराव को देने और सखाराम बापू व नाना फड़नवीस को राज्य का भार सँभालने का निर्णय मरने के समय किया था। धैर्य, न्याय, निष्पक्षपात, चतुरता तथा शासन-सुप्रबन्ध की दृष्टि से माधवराव अपने कुल में एक ही जन्मा था। उसके न्यायाधीश रामशास्त्री प्रभुणे की कीर्ति महाराष्ट्र में आज भी गाई जाती है। वास्तव में माधवराव के काल बसने से महाराष्ट्र को भारी हानि हुई। इतनी बड़ी हानि पानीपत के संहार से भी न हुई थी। माधवराव की मृत्यु होते ही महाराष्ट्र के अधःपतन का समय प्रारम्भ हुआ।

(५) मुरारराव घोरपड़े—शिवाजी के पहले उद्योग से ही जिन मराठे घरानों ने कितने ही बादशाहियों तक बराबर मेहनत की थी, उनमें घोरपड़े का घराना मुख्य है। औरङ्गज़ेब को सदा में करने वाला सन्ताजी घोरपड़े का वध होने पर उसका भाई बहीरजी आगे आया। इस बहीरजी के नाती मुरारराव का चरित्र अनेक कारणों से बड़ा विचित्र है। उसका जन्म सन् १७०४ में हुआ और उसकी मृत्यु हैदरअली के श्रीरङ्गपट्टन के समीप कपालदुर्ग किले में सन् १७७९ में हुई। उसके इतने लम्बे जीवन में जितने अनुभव और पराक्रम देखे जाते हैं उतने अन्य किसी

विरुद्ध उठ खड़े हुए थे उनका भी ठीक ठीक प्रबन्ध किया, इसके लिए महादजी ने फ्रेंच लोगों को नौकर रख उनसे अपने सिपाहियों को पाश्चात्य युद्ध-शिक्षा दिलाई और बादशाह से कह कर उसने "वज़ीरी" का पद पेशवा के नाम लिखा कर स्वयं पेशवा का नायब बना।

यद्यपि दिखावे के लिए भिन्न भिन्न सरदार और अधिकारी दिल्ली में महादजी के अनुकूल हो गये थे, तथापि गुप्त रूप से वे महादजी के सर्वथा विरुद्ध थे। राजपूत और मुसलमान दोनों एकत्र होकर महादजी के विरुद्ध षड्यंत्र रचने लगे, क्योंकि मराठों का शासन राजपूतों को नहीं पसन्द था। और मुसलमान इस लिए रूठे हुए थे कि उनकी जागीरें महादजी ने ज़ब्त कर ली थीं। किन्तु दो-चार लड़ाइयों में ही महादजी ने उनको परास्त कर दिया। इस मामले में महादजी के साथ अंबाजी इंगले, रायबा दादा बक्षी, राणेखान, खंडेराव हरि, तुकोजी होल्कर और अली बहादुर इत्यादि ने अच्छा पराक्रम दिखाया। इनकी सहायता से महादजी ने दिल्ली में अपना प्रबन्ध सफलता-पूर्वक किया। राजपूतों को जीत कर अजमेर, पुष्कर इत्यादि स्थान महादजी ने अपने अधिकार में किये। यह सब कार्य कर वह सन् १७९२ की गरमी की ऋतु में पूना आया। विजय प्राप्त कर पूना आने में उसकी बड़ी बड़ाई हुई। पूना में एक बड़ा दरबार करके बादशाह से प्राप्त हुए खिताब और खिलअत इत्यादि उसने पेशवा को अर्पित की। परन्तु कुछ दिनों बाद नाना और महादजी के बीच राज काज के मामले में तना-तनी हो गई। लेकिन हरिपंत फड़के ने इन दोनों में फिर मेल करा दिया। इसके बाद महाराष्ट्रों के दुर्दैव से महादजी सिंधिया बहुत दिनों तक जीवित न रहा। १२-२-१७९४ के दिन ज्वर से पीड़ित होकर वानवड़ी नामक स्थान में उसका देहान्त

मरहठायुद्धों का मध्यस्थ क्षेत्र

युद्ध और घेरे

दिल्ली
रामपुर
अलीगढ़
फर्रुखाबाद
लसवाड़ी
डीग
भरतपुर
आगरा
ग्वालियर
टोंक
बुंदेलखण्ड
मा
ल
वा
इन्दौर
नर्मदा
बुरहानपुर
नागपुर
वर्धा
पेनगंगा
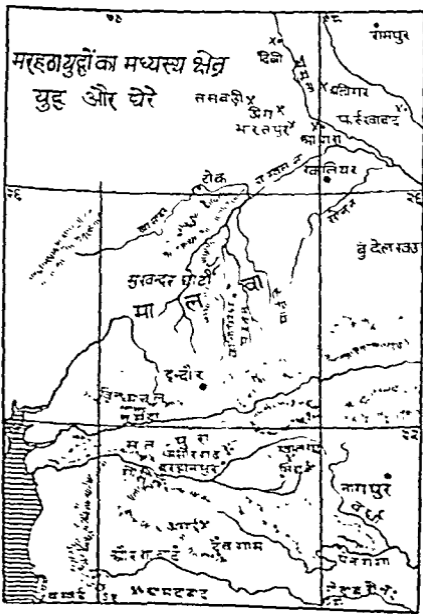
हो गया। मरने के समय उनकी अवस्था ६७ वर्ष की थी। महाराष्ट्र शक्ति के निर्माताओं में महादजी का भी नाम गिना जाता है। वह स्वभाव से शांत और धैर्यवान था। चाहे कैसी बात बना कर दूसरे के चित्त की छिपी बात निकाल लेने में वह बड़ा प्रवीण था। लेकिन अपने चित्त का आशय कभी किसी पर नहीं प्रकट होने देता था। विपत्ति के समय उसकी शान्ति में ज़रा भी फर्क न पड़ता था। लेकिन हिसाब-किताब और कागज़ों के काम में बिलकुल कोरा था। नाना फड़नवीस का स्वभाव इसके विपरीत था, अर्थात् बड़े मर्यादवाला, कभी किसी नगर का रियायत न करनेवाला, संकट में घबरा कर पागल सा बन जानेवाला, और हिसाब-किताब में अत्यंत पटु था। नाना कामकाज में पूरा अभ्यस्त होने से सभी बारीक से बारीक बातें याद रखता और उनका निरीक्षण स्वयं करता था। महादजी धीमी चाल चलनेवाला, ढीला और दीर्घसूत्री था। दोनों एक दूसरे से सहमत होने तभी राज का कारबार अच्छा चल पाता। एक दूसरे के बिना दोनों लंगड़े हो जाते। "बार भाई" की सभा में प्रधान मंडलों के अधिक मतानुसार शासन-कार्य करने की उत्कृष्ट व्यवस्था हो गई थी। उसे नष्ट करके नाना फड़नवीस ने अकेले ही अपने हाथों में शासन का सब काम रक्खा। इसके अभाव में सब चतुरों की मंडली का उसने एक मंडल बना कर शासन-भार की व्यवस्था स्थिर की, तथापि महाराष्ट्र शक्ति इतनी जल्दी अग्रसर न हो पाती थी। महादजी का दूसरा नाम "पाटील बुवा" भी था। उसके कोई संतान भी न थी। इसलिए दौलतराव को उसने गोद लिया। लेकिन वह महादजी के समान पराक्रमी और कर्त्तव्यशील न था।

(४) खर्डा की लड़ाई (सन् १७९५) निज़ाम और

मृत्यु—इस प्रकार यद्यपि बाहर से महाराष्ट्र-राज्य का प्रबन्ध सब ठीक था और वह शक्ति-सम्पन्न दिखाई देता था, तथापि उसकी भीतरी दशा ख़राब हो चली थी। धीरे धीरे अंग्रेज़ी सत्ता की वृद्धि हो रही थी। बड़ी सावधानी से पुष्ट किया गया सवाई माधवराव बड़ा ही दुर्बल पुरुष निकला। राघोबा का पुत्र बाजीराव शिवनेरी क़िले में क़ैद था। वहाँ बैठे बैठे गुप्त रीति से उसने सवाई माधवराव के साथ कार्रवाई करनी शुरू की। यह बात नाना फड़नवीस को भी विदित हो गई। अतः उसने बाजी-राव की क़ैद और भी सख़्त कर दी, सवाई माधवराव पर भी दृष्टि रखनी शुरू की। सन् १७९५ के वर्षाकाल में वह ज्वर से पीड़ित हुआ और उससे वह दिन प्रतिदिन क्षीण होने लगा। अक्टोबर मास में दशहरा के दिन ज्वर का प्रकोप अधिक हुआ। द्वादशी के दिन वह ऊपर के छज्जे पर बैठा था। अचानक उठने के कारण उसे चक्कर आया और वह नीचे फ़र्श पर आ गिरा। इस चोट से विह्वल होकर पूर्णिमा के दिन (२१-१०-१७९५) उसकी मृत्यु हो गई। इस दुर्घटना के दो ही-चार वर्षों के अनन्तर रामशास्त्री, हरिपंत फड़के, अहिल्याबाई, महादजी सिंधिया, तुकोजी होलकर इत्यादि महाराष्ट्र के समुन्नत कार्यकर्त्ताओं की भी मृत्यु हो गई। आगे चलकर परशुराम पंत और नाना फड़नवीस के चल बसते ही मराठों के स्वातंत्र्य का अंत हो गया।

ऊपर अहिल्याबाई की चर्चा की जा चुकी है। भारत के शासकों और पराक्रमशालिनी स्त्रियों में अहिल्याबाई की गिनती होती है। यह मल्हारराव होलकर की पुत्रवधू और खंडेराव होलकर की पत्नी थी। एक लड़का होने पर पति की मृत्यु हुई। बाद को ससुर की भी मृत्यु २०-५-१७६६ को हो गई। मल्हारराव की

योग्यता अत्यधिक थी। पहला बाजीराव ही "गुरीला" लड़ाइयों का निर्माता था। अपना स्वार्थ साधकर राज्य का कल्याण यदि सधे तो वह राज्य का कार्य करता था। वह केवल लड़ने में ही प्रवीण न था, बल्कि उसमें विचारशक्ति, दूरदर्शिता और सावधानी के साथ कार्य करने के भी विशेष गुण थे। उसके मरने के बाद अहिल्याबाई ने ३० वर्ष तक होलकर-राज्य का शासन किया, और लौकिक हित के अनेक काम भी उसने किये। वह अत्यन्त धर्मनिष्ठ थी। उसके मंदिर, घाट, धर्मशाला, अन्नसत्र इत्यादि परोपकार के काम भारत में आज भी मौजूद हैं। यदि वह पुरुष होती तो महादजी सिंधिया की अपेक्षा उसका महत्त्व कम न होता। उसके ऊपर जो अनेक कष्ट आये उन्हें उसने धैर्यपूर्वक झेल लिया।

कठपुतली बना लिया। बाजीराव के चित्त में नाना फड़नवी के विरुद्ध विद्वेषाग्नि भभकती रहने के कारण उसने नाना को र कर लेने के लिए सिन्धिया को प्रेरित किया। इस काम के लि बाजीराव ने दो करोड़ रुपये देने का वचन सिन्धिया को दिय इस शर्त के अनुसार सिन्धिया ने नाना फड़नवीस को क़ैद लिया और बाजीराव से उसके वचनानुसार दो करोड़ रु माँगे। पैसा पास न होने से उसने सिन्धिया से पूना शहर ल कर दो करोड़ रुपये वसूल करने को कहा। अतः सिन्धिया नगर के सेठ-साहूकारों के घर लूटकर अपना रुपया वसू किया। लोगों का संरक्षण न कर धनियों को लूटना इत्यादि नि कर्मों के विषय में आगे वर्णन किया जायगा। इसके बाद अधि गड़बड़ फैलने पर नाना का छुटकारा हुआ और सिन्धिया व से भाग खड़ा हुआ (सन् १७९९)।

(२) नाना फड़नवीस की मृत्यु—इस घटना के बा सिन्धिया और बाजीराव में परस्पर अनबन हो गई। अन सिन्धिया ने नाना को क़ैद से छोड़ दिया। यद्यपि बाजीराव ं उसे फिर राज-काज का काम पूर्ववत् सौंप दिया, तथापि वह नान के साथ अविश्वास और कपट का ही व्यवहार करता। नान यह सोचा करता था कि बाजीराव स्वयं अकेले राज्य-कार्य चल सकता है, किन्तु उसका यह अनुमान ग़लत निकला। अतः जितन उससे हो सका उसने उद्योग कर राज्य के बचाव करने का कुछ न कुछ प्रयत्न अवश्य किया। अन्त में १३ मार्च सन् १८०० के उसकी मृत्यु हुई। लड़कपन से ही नाना ने शासन की उन्नति और अवनति देखी थी। उसका प्रबन्ध और देख-भाल बड़े मार्के की होती थी। वह नियम से रहता और मेहनत करता था। उसकी

स्मरणशक्ति अपूर्व थी। वह बड़ा मेधावी था। चारों ओर की खबरों का पता रखना उसके हाथ की बात थी। परन्तु स्वयं शूर और दृढ़चित्त का सरदार न होने से उससे स्थिर व्यवस्था न हो सकी। विभिन्न राज्यों में अपने गुप्तचर भेजकर उनके द्वारा उनके दरबार में अपना प्रभाव जमाये रक्खा। उसके रहते विदेशियों का प्रवेश मराठों के राज्य में न हो सका। 'नाना फड़नवीस की मृत्यु होने से मराठों के राज्य में चतुरता और नीति की इतिश्री हो गई।" यह कथन अंग्रेज़ नीतिज्ञों का है। परशुराम भाऊ पटवर्धन १८९-१७९९ के दिन मरा और राज्य में कार्यकर्ता पुरुष अब कोई न रह गया।

(३) तैनाती फ़ौज—नाना फड़नवीस की मृत्यु के बाद उसके पक्ष के लोगों को दुःख देने का कार्य बाजीराव ने प्रारम्भ किया। इधर सिन्धिया और होल्कर की परस्पर अनबन हो गई। यशवंतराव होल्कर के भाई विठोजी को बाजीराव ने हाथी के पाँव से कुचलवाकर मार डाला। इस कार्य से यशवंतराव को बड़ा दुःख हुआ और उसने पूना पर आक्रमण कर दिया। बाजीराव ने अपनी फ़ौज उसके विरुद्ध भेजी और स्वयं भागकर सिंहगढ़ में जा छिपा। होल्कर ने पूना पर अधिकार कर लिया। अंग्रेज़ों ने बाजीराव को सिंहगढ़ से बसई लाकर उसे अपने अधिकार में कर लिया। वहाँ अंग्रेज़ों से सन्धि कर पेशवाई वापस दिलाने के लिए बाजीराव ने अंग्रेज़ों से सहायता ली। पचीस वर्ष पहले रघुनाथराव की जो अवस्था हुई वही अवस्था कुछ कुछ बाजीराव की भी हुई। इन पचीस वर्षों में अंग्रेज़ी राज्य का फैलाव बहुत हो गया था और अंग्रेज़ों ने अपने कर्तव्य का ठीक ठीक निश्चय कर लिया था। इसलिए पहले

जिस प्रकार युद्ध में ध्येय बिगड़ गया, वैसा कहीं फिर न बिगड़े, इसकी सावधानी रखने का उन्होंने निश्चय किया।

पेशवा के दरबार में जैसी अव्यवस्था फैल रही थी, वैसी ही अव्यवस्था किसी न किसी अंश और रूप में सारे भारत के रजवाड़ों में फैल रही थी और बाजीराव के समान सहायता माँगनेवाले अनेक लोग अंग्रेज़ों के सामने खड़े रहते थे। अत. "हम तुमको सहायता के लिए फौजें देते हैं। उसके खर्च भर के लिए तुम अपने राज्य का कुछ अंश सदैव के लिए हमें दे दो। तुम अंग्रेज़ों की सार्वभौम सत्ता स्वीकार करो और तुम्हारे आपस के झगड़े खड़े होने पर एक दूस लड़ाई इत्यादि न करके उसका निर्णय हम से लो, और जो निर्णय हम करें उसे तुम मानो।" इस प्रकार का अपना मतलब अंग्रेज़ों ने इस सन्धि-द्वारा साध लिया। जिस राजा ने सहायता ली वह अंग्रेज़ों की सार्वभौम सत्ता के नीचे आ गया। और यदि सहायता न ली तो दूसरा अन्य कोई उसका सहायक होने पर शत्रुओं द्वारा घेरा जा कर उसका नाश होना अवश्यम्भावी था ही। इस प्रकार भारत के रजवाड़ों में तैनाती फौज रखने की जो पद्धति अंग्रेज़ों ने निकाली वह "तैनाती फ़ौज की पद्धति" (Subsidiary Alliance) के नाम से प्रसिद्ध है। बाजीराव ने अन्य कोई उपाय अपने ध्येय के साधन का न देख ऊपर की लिखी हुई शर्तें स्वीकार करके अंग्रेज़ों की फ़ौज अपनी सहायता के लिए ले ली। इस पद्धति के निकालने और उसके योग से भारत के राज्यों पर अधिकार करने में नीतिनिपुण गवर्नर जनरल लार्ड वेलेज़ली, बम्बई के कर्नल क्लोज़ और मध्य-भारत के कर्नल मालकम विशेष प्रसिद्ध हैं। उनके बराबर का एक भी व्यक्ति इस समय महाराष्ट्र में न

था। भारतीय राज्यों पर अधिकार करने में अंग्रेज़ों को जो कुछ थोड़ी सी कठिनाई थी वह महाराष्ट्र के कारण थी। वह भी बाजीराव के ऊपर के कृत्य ने दूर कर दी। उसने २० लाख की आय का देश देकर ८ हज़ार अंग्रेज़ी फ़ौज अपनी सहायता के लिए ली। इस फ़ौज का सेनापति गवर्नर जनरल का भाई जनरल वेलेज़ली था। यही बाद को इङ्गलैण्ड जाकर ड्यूक आव वेलिंग्टन के नाम से प्रसिद्ध हुआ। बाजीराव ने ३१ दिसम्बर सन् १८०२ को अंग्रेज़ों को प्रतिज्ञापत्र लिख कर दे दिया। इसको बसई की संधि कहते हैं। उसमें ये शर्तें थीं—(१) अंग्रेज़ अपनी दस हज़ार फ़ौज बाजीराव के संरक्षण के लिए नियतरूप में देंगे, और उसके ख़र्च के लिए ३६ लाख का अपना राज्य बाजीराव अँग्रेज़ों को देगा। (२) अंग्रेज़ों के यूरोपीय शत्रुओं को बाजीराव अपने देश में आश्रय न देगा। (३) अन्य रजवाड़ों के साथ बाजीराव का झगड़ा होने पर अंग्रेज़ उसको निर्णय करेंगे। (४) अंग्रेज़ों की परवानगी लिए बिना वह कोई युद्ध अथवा कोई संधि किसी राज्य के साथ न करेगा। बस इस सन्धि ने महाराष्ट्र-शक्ति का अंत कर दिया।

यशवंतराव होलकर को बाजीराव का यह काम न पसन्द आया। यशवंतराव की इच्छा पेशवा के राज्य को अपने अधीन करने की न थी। बाजीराव अंग्रेज़ी फ़ौज को लेकर पूना आ रहा है, यह ख़बर सुनते ही होलकर ने पूना छोड़कर अपने राज्य की राह ली। जाने से पूर्व पूना शहर को मनमाने ढङ्ग से लूट कर वह बहुत धन अपने साथ ले गया। अंग्रेज़ी फ़ौज ने पूना में प्रवेश कर बाजीराव को पेशवाई पर बैठाया। इस फ़ौज की छावनी बाद को बहुत दिनों तक पूना के पूर्व घोड़ नदी के किनारे शिरूर में रही।

(४) अंग्रेज़-मराठों का दूसरा युद्ध—बाजीराव ने अँग्रेज़ों से तैनाती फौज की संधि की, यह बात अन्य मराठे सरदारों को बिलकुल न रुची। वास्तव में छत्रपति की ओर से पेशवा सब राज्य का और उसकी शाखा का केवल कार्यकर्त्ता-मात्र था। वह मालिक न था। इसलिए उसकी की हुई यह संधि अन्य लोगों को मान्य न हुई। गायकवाड़ ने चार मास पूर्व ऐसी संधि अंग्रेज़ों के साथ की थी। नागपुर के भोंसले इत्यादि कितने ही सरदार पहले से ही पेशवा का साथ न देते थे। अब सिंधिया और होलकर बाजीराव को विचलित देख उसकी संधि को उन्होंने नहीं स्वीकार किया। अंग्रेज़ों ने मराठे-सरदारों से कहा कि तुम्हारा सब का प्रधान पेशवा है। उसने हमारी इस संधि को स्वीकार कर ही लिया है, इसलिए तुम्हें भी अब इसे स्वीकार करना चाहिए और तुम्हें बाजीराव के या इतर राज्य में फौज ले आकर लड़ाई नहीं करना चाहिए। अपने राज्य में आकर रहो। यह बात मराठे सरदारों को न रुची। उन्होंने कहा कि "हम पर हुकूमत करनेवाले तुम कौन हो?" लेकिन हुकूमत करनेवालों की शक्ति का पता उन्हें न था। अंग्रेज़ों ने मन में कहा कि अब तुम अपने अपने राज्य-सीमा से निकल कर आओगे तब तुमको दिखायेंगे कि यह हुक्म देनेवाला कौन है। ऐसा विचार कर अंग्रेज़ों ने मराठे सरदारों के साथ एक साथ युद्धघोषणा की।

इस युद्ध में दो लड़ाइयाँ हुईं। एक बरार में, दूसरी उत्तर में। दिल्ली शहर और मुग़ल-बादशाह सिंधिया के अधिकार में थे। अतः दिल्ली पर अधिकार किये बिना अंग्रेज़ों को भारत का स्वामित्व मिलनेवाला न था। सिंधिया को फ्रेंचों की सहायता मिलने से

फ़ौजों को परास्त करने का ही अंग्रेज़ों का उद्देश था। उत्तर के युद्ध में जनरल लेक और दक्षिण के युद्ध में जनरल वेलेज़ली अंग्रेज़ी फ़ौजों के मुख्य सेनापति थे। अगस्त सन् १८०३ में वेलेज़ली ने अहमदनगर के क़िले पर अधिकार कर लिया। इधर गुजरात में अंग्रेज़ी फ़ौजों ने भड़ौंच शहर ले लिया। सितम्बर मास में असाई स्थान में बड़ी घमासान लड़ाई होने के बाद वेलेज़ली ने सिंधिया को परास्त किया। अन्य फ़ौजों ने असीरगढ़ व बुरहानपुर भी सिंधिया से ले लिये और बंगाल की फ़ौजों ने भोंसले के कटक नगर पर अधिकार कर लिया। उत्तर में जनरल लेक ने अलीगढ़ और दिल्ली की सिंधिया की फ़ौजों को हराकर दिल्ली पर अधिकार कर लिया। अतः वृद्ध मुग़लबादशाह शाहआलम अंग्रेज़ों के अधीन हो गया। बाद को लासवाड़ी में फिर घमासान लड़ाई हुई और सिंधिया की फ़ौजों पर लेक को विजय मिली। इधर बरार में अरगाँव में सिंधिया और भोंसले की सम्मिलित फ़ौजों को वेलेज़ली ने फिर हराया। पूरे चार महीने की लड़ाई के बाद अंत में सन् १८०३ के दिसम्बर मास में देवगाँव में अंग्रेज़ों और भोंसले की संधि हुई। इसकी शर्तें ये थीं—(१) वर्धा नदी के पश्चिम ओर का बरार-प्रान्त व कटक-प्रान्त भोंसला अंग्रेज़ों को दे। (२) निज़ाम के ऊपर जो हक़ है उसको भोंसला छोड़ दें। (३) अन्य रजवाड़ों के साथ झगड़ा खड़ा होने पर जो निर्णय अंग्रेज़ करें वह भोंसला स्वीकार करे और (४) अंग्रेज़ों का रेज़िडेंट नागपुर में रहे। इसी प्रकार की संधि अर्जुनगाँव में सिंधिया के साथ अंग्रेज़ों ने की। वह यह थी—(१) गंगा-यमुना के बीच का भूभाग और दक्षिण के कुछ

तेरहवाँ अध्याय

महाराष्ट्र-शक्ति का अन्त

सन् १८०८-१८१८

१—तीसरा मराठा-युद्ध
२—भोंसले और होल्कर के विरुद्ध लड़ाइयाँ
३—पिंडारियों से युद्ध
४—महाराष्ट्र-शक्ति का अन्त
५—मराठा-शक्ति के डूबने के कारण

(१) तीसरा मराठा-युद्ध (सन् १८१७-१८)—सन् १८०८ में छत्रपति द्वितीय शाहू मरा और उसका लड़का प्रतापसिंह सतारा की गद्दी पर बैठा। इधर जैसा ऊपर कहा जा चुका है, मराठे सरदारों की शक्ति तोड़ने के लिए अंग्रेज़ तैयार थे। लेकिन यूरोप में अंग्रेज़ों के साथ नेपोलियन के नेतृत्व में फ्रेंचों का युद्ध छिड़ जाने से अंग्रेज़ लोग विपत्ति में फँस गये थे। इसी लिए सैनाती फ़ौज की पद्धति का जल्दी प्रचार कर भारत में अंग्रेज़ों के सार्वभौमत्व स्थापित करने का वेलेज़्ली-द्वारा शुरू किया गया कार्य उस समय पूर्णरूप से सिद्ध न किया जा सका। यह काम गवर्नर जनरल हेस्टिंग्ज़ ने पूरा किया। पहले के युद्धों में मराठे सरदारों की हार हुई थी, तथापि अंग्रेज़ी सत्ता को उन्होंने सन्तुष्ट होकर स्वीकार न किया था। गुप्तरूप में ये लोग युद्ध की तैयारी करके अनुकूल अवसर के लिए ठहरे हुए थे। प्रत्यक्ष रूप में बाजीराव पेशवा अंग्रेज़ों से प्रेम रखता था।

यह स्थानांतर [illegible] और पेशवा [illegible] इससे
वे अंग्रेजों के सहायता न [illegible] [illegible] कि [illegible]
की किसी सहायता अंग्रेजों ने की थी [illegible]
सहायता करेंगे, [illegible] के लिए जाने पर [illegible]
जाएंगे। लेकिन बाद में [illegible] उसको [illegible]
दूर कर दिया। यद्यपि बाजीराव [illegible]
[illegible] अंग्रेजों का [illegible] लोगों [illegible]
लोग काम [illegible] पूरा [illegible]
दिया रखता था। क्योंकि अंग्रेजों [illegible] और [illegible]
दुर्बलता आ गई थी कि अंग्रेजों के प्रभाव के सामने उसका
टिकना सम्भव न था। अधिक से अधिक इतना ही सम्भव था
कि यदि सफलता से काम किया जाता तो १०-२० वर्ष और भी
चलता, लेकिन उसका पतन आगे-पीछे अवश्यम्भावी था।

बाजीराव और अन्य रजवाड़ों के बीच जो झगड़े रहे होंगे उनका निर्णय करना अंग्रेजों ने प्रारंभ किया। इसमें गायकवाड़ और बाजीराव का झगड़ा बहुत दिनों चला। उसका फैसला करने के लिए गंगाधर शास्त्री पटवर्धन अंग्रेजों की मध्यस्थता में पूना आया (सन् १८१५)। उसके जीवन की जिम्मेदारी अंग्रेजों ने ले रक्खी थी। पूना से बाजीराव और गंगाधर शास्त्री पंढरपुर गये। एक दिन वहाँ गंगाधर शास्त्री का खून किया गया। त्रिंबकजी डेंगले नामक एक व्यक्ति बाजीराव का बड़ा कृपा पात्र था। उसने बाजीराव के कहने पर यह हत्या की थी। अंग्रेजों को यह बात विदित होने पर उन्होंने त्रिंबकजी को अपनी अधीनता में करने के लिए बाजीराव से उसे माँगा। बाजीराव ने पहले तो उसका पता ही न दिया, लेकिन अन्त में उसने त्रिंबकजी को अंग्रेजों के हवाले कर दिया। अंग्रेजों ने उसे हवालात में बन्द कर दिया।

में तैनाती फ़ौज स्वीकार कर अंग्रेज़ों से सुलह कर ली।

नागपुर में भोंसले के दरबार में भी बड़ा गड़बड़ फैल रहा था। सन १८१५ में परसोजी भोंसले का खून हो गया था और आप्पा साहब भोंसले गद्दी पर बैठा था। उसने अंग्रेज़ों के साथ मेल करके उनकी तैनाती फ़ौज अपने यहाँ रख ली थी। पर बाद को बाजीराव के साथ अंग्रेज़ों का युद्ध छिड़ते ही आप्पा साहब ने अंग्रेज़ी छावनी पर हमला किया। सीताबलडी में लड़ाई हुई। इस लड़ाई में आप्पा साहब हारकर अंग्रेज़ों की शरण में गया (सन् १८१७)। बाद को उसे इलाहाबाद लाते समय वह राह से ही भाग गया। तब जोधपुर के राजा की मार्फ़त उसको वार्षिक पेंशन अंगरेज़ों ने दी।

(३) पिंडारी-युद्ध (१८१७-१८)—मराठा शाही के अस्त होने के समय "पिंडारी" नाम के लोग मध्य-भारत के भिन्न भिन्न भागों में प्रसिद्ध थे। मुग़ल-बादशाही और मराठाशाही इन दोनों की ही सत्ता नष्ट हो गई और उनके स्थान में अंग्रेज़ी सत्ता स्थापित हुई। किन्तु वह अभी पूर्णरूप से जम न पाई थी कि ऐसे अव्यवस्थित समय में लूट-पाट और दंगे करके पेट भरनेवाले लोगों का एक भिन्न समूह तैयार हो गया। यही लोग पिंडारी कहलाते थे। ये पिंडारी लोग लूट की आशा में चाहे जिसकी नौकरी कर लेते थे। गुड़री खाँ, गुलाम महम्मद, इमाम बख्श, हीरा बर्रन, छट्टू, करीम खाँ, अमीर खाँ, वासील महम्मद इत्यादि पिंडारियों के सरदार थे। इनमें अन्तिम चार गवर्नर जनरल हेस्टिंग्ज़ के समय में वर्तमान थे। अंग्रेज़ों के जीते हुए देश में तथा उनके मित्रों के राज्यों में पिंडारियों ने बड़ा दंगा करना शुरू किया।

में मर गया। इसके कोई लड़का न होने के कारण इसका राज्य अंग्रेज़ी राज्य में मिला लिया गया। तंजोर की जागीर भी इसी तरह अंग्रेज़ी अमलदारी में मिला ली गई।

दक्षिण के अन्य राज्य—शाहु छत्रपति के समय में ताराबाई ने कोल्हापुर में अपना अलग राज्य स्थापित किया था। यह आज भी वर्तमान है। सतारा के अष्टप्रधानों में प्रतिनिधि आमात्य और सचिव इत्यादि के वंशों में थोड़ी बहुत जागीर अब भी चली जाती है। पेशवाओं ने दक्षिण महाराष्ट्र में पटवर्धन की स्थापना की थी। उस घराने की कितनी ही शाखाएँ सांगली, मिरज, कुरंदवाड़, जमखंडी इत्यादि स्थानों में हैं और उसके अधीन छोटे छोटे राज्य हैं। उसी तरह फलटन के निंबालकर, मुधोल के घोरपड़े, अक्कलकोट के भोंसले, सावंतवाड़ी के सरदेसाई इत्यादि पहले के अनेक मराठे सरदार अपनी अपनी जागीरों में अंग्रेज़-सरकार की छत्र-छाया में राज्य करते हैं।

उत्तरी महाराष्ट्र-राज्य—नागपुर के भोंसलों का राज्य बहुत लम्बा-चौड़ा था। यह सन् १८५३ में अंग्रेज़ी अमलदारी में मिला लिया गया। इसके अतिरिक्त मराठों के अन्य बड़े राज्य अर्थात् सिन्धिया, होल्कर और गायकवाड़ के तथा धार और देवास में पँवारों के राज्य वर्तमान हैं। बाजीराव के पतन के बाद ये राज्य अंग्रेज़ों की शरण में आ गये। इसी प्रकार झाँसी, सागर, जालौन, गुलसराय इत्यादि राज्य ब्राह्मणों की अमलदारी में थे, वे सब डल्हौज़ी के शासन-काल में अंग्रेज़ी अमलदारी में मिला लिये गये।

गायकवाड़ों के मूल-पुरुष दामाजी का उदय सेनापति खंडेराव दाभाड़े की अधीनता में काम करने से हुआ था। सन् १७३१ में

उभई की लड़ाई में सेनापति त्रियंबकराव दाभाडे मारा गया। अत दाभाडों का गुजरात का काम गायकवाड़ को दिया गया। इसी प्रकार अधिक उद्योग करके इन्होंने गुजरात में अधिक देश जीता। बसई की सुलह होने के पूर्व अंग्रेज़ों की सैनाती फ़ौज को स्वीकार कर गायकवाड़ों ने अंग्रेज़ों का सार्वभौमत्व स्वीकार किया। गायकवाड़ों के घराने में पहले सयाजीराव (सन १८१९-४७), गणपतराव (सन १८४७-५६), खण्डेराव (१८५६-७०) और मल्हारराव (सन १८७०-७५) ने क्रम से राज्य किया। वर्तमान सयाजीराव सन १८७५ में गद्दीनशीन हुए और अपने घराने की प्रतिष्ठा भले प्रकार से रक्षित किये हुए हैं।

गायकवाड़ों की तरह ही सिन्धिया के घराने में जयाजीराव और उसका लड़का माधवराव बड़ा प्रसिद्ध हुआ। जयाजीराव सिन्धिया, तुकोजीराव होलकर और खण्डेराव गायकवाड़ परस्पर समकालीन थे और अंग्रेज़ी अलमदारी में प्रधान समझे जाते थे। माधवराव सिन्धिया सन् १९२५ में मरा और उसका लड़का जार्ज जयाजीराव गद्दी पर है।

(५) मराठा-शाही के अस्त होने के कारण—सन १६६४ में शिवाजी ने मराठों का स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया। वह लगभग १५० वर्ष रहकर अस्तप्राय हो गया। इस काल में राज्य-व्यवस्था में अनेक फेर-फार हुए। प्रारंभ में शिवाजी का इस राज-स्थापन में क्या उद्देश था, और इसमें किस प्रकार विकार उत्पन्न हुए, ये बातें ऊपर भली भाँति समझा दी गई हैं। शिवाजी जानता था कि राज्य प्रजा के पालन के लिए होता है, सुख-भोग करने और लूटने के लिए नहीं। वह लोगों को सुख देने का एक साधन है। प्रजा का पालन-पोषण करना ही राजाओं का मुख्य कर्त्तव्य है। उसने किसी स्वार्थ-साधन के लिए यह राज्य स्थापित नहीं किया

था। सभी के संकटों को दूर करने के लिए वह सदा तैयार रहता था। जब शिवाजी ऐसा उदार व्यक्ति बना तभी वह महाराष्ट्रों का राज्य स्थापित कर सका। संभाजी और राजाराम के शासन-काल में घोर संकट आ पड़ने पर मराठों ने जब शिवाजी-द्वारा दिखाये गये स्वार्थ-त्याग के मार्ग का अनुसरण किया तभी उनके संकट दूर हो सके और महाराष्ट्रसत्ता की रक्षा हुई।

परन्तु शाहू के आगमन के बाद उपर्युक्त मार्ग का त्याग किया गया। (१) पन्तप्रधान शासन का प्रारंभ हुआ। मराठे सरदार सरंजामी पद्धति का अनुसरण कर भिन्न भिन्न क्षेत्रों में एक दूसरे से बिलकुल स्वतंत्र होकर अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करने लगे। उनपर नियंत्रण रखना भी कठिन हो गया। इसी तरह सभी प्रमुख सरदारों का कार्य परम्परानुगत उनके वंशज ही करने गये, इसलिए प्रत्येक सरदार का अपना रास्ता अलग हो गया और साम्राज्य की रक्षा करने की अपेक्षा वे लोग अपने वतन, अपने राज्य, अपनी जागीरों की रक्षा विशेष रूप से करने लगे। इससे साम्राज्य की रक्षा करनेवाला कोई व्यक्ति न रह गया। महाराष्ट्र सरदारों पर नियंत्रण करने वाली केन्द्र-शक्ति राज्य के अधिक विस्तृत हो जाने के कारण अपना प्रभाव पूर्ववत् बनाये रखने में निर्बल हो गई। मराठे सरदारों ने देश भर में आक्रमण करने की धूम मचा दी। उनमें परस्पर साम्य न होने के कारण प्रत्येक सरदार यथेच्छाचार करने लगा। इससे देश की दैवत को बड़ा कष्ट हुआ। लूटपाट, मार-काट और अग्निकाण्डों की भरमार होने लगी। शिवाजी के समय की सुराज्य-कीर्ति लुप्त हो गई। मराठों के हमले शुरू हुए। इन हमलों ने राजपूताने इत्यादि प्रान्तों के लोगों को त्रस्त कर दिया, अर्थात् लोगों ने मराठों के इस प्रकार के अंधाधुन्ध शासन को बिलकुल नापसंद किया।

(२) मराठों के शासन में आर्थिक स्थिति बिगड़ गई। पेशवाओं ने शिवाजी के समय के अपने जहाज़ी बेड़े की उन्नति न करके उल्टा अंग्रेज़ों की सहायता लेकर उसका नाश कर दिया। अतः समुद्रतट का शासन अंग्रेज़ों के हाथ में चला गया। (३) युद्ध-कला और शास्त्र के ज्ञान में वे अंग्रेज़ों की बराबरी बिलकुल न कर सकते थे। (४) पास-पड़ोस के राज्यों में क्या उद्योग हो रहा है—इसका उन्होंने बिलकुल ही अध्ययन न किया। सारांश यह कि यूरपीयों की राज्य-व्यवस्था और प्रबंध मराठों से कहीं अधिक चढ़-बढ़ कर थे। इसीसे अंग्रेज़ों के प्रभाव के सामने मराठों को हार खानी पड़ी। (५) नारायणराव पेशवा के मारे जाने के बाद से राज्य में अनेक प्रकार का गड़बड़ फैल गया। और दूसरे बाजीराव ने और भी अधिक अवस्था बिगाड़ दी। अपने ही लोगों द्वारा उसने पूना शहर लुटवाया। शासकों के सामने अनेक बार धन का अभाव पूरा करने का मौक़ा आया है, लेकिन स्वयं अपनी प्रजा को लूटने का कुकृत्य करने से प्रजा नाराज़ हो गई। विदेशी लोगों का विश्वास मराठों पर से उठ गया और ऐसी लूट से स्वयं महाराष्ट्र के रहनेवाले लोग विरुद्ध हो गये। इसी लिए (६) जब न्याय-प्रिय अंग्रेज़ों का शासन देश में शुरू हुआ तब सेठ-साहूकार रैयत सभी आनन्द का अनुभव करने लगे। उन्हें प्रतीत हुआ कि बड़ी विपत्ति से अंग्रेज़ों ने उनका छुटकारा किया है। एल्फिन्स्टन, माल्कम इत्यादि नीतिज्ञ शासकों के चातुर्य, नीति, लोकहित इत्यादि कार्यों से लोगों में एक प्रकार का संतोष उत्पन्न हो गया और अंग्रेज़ों के शासन को दृढ़ करने तथा उनके राज्य को बढ़ाने में लोगों ने तन-मन से उनकी सहायता की। सारांश यह कि स्वार्थ से व अनीति से नाश होता है। यह बात ऊपर दिये गये वृत्तांत से स्पष्ट है। मराठों का शासन

अस्त क्यों हुआ, यह जानने के लिए पठनपाठन और अध्ययन का अभ्यास ज्यों ज्यों बढ़ेगा, वैसे ही वैसे यह बात भली भाँति समझ में आवेगी।

---

* प्रथम भाग समाप्त *

Printed by K. P. Dar at the Allahabad Law Journal Press, Allahabad.
Published by [illegible] Allahabad.

परिशिष्ट

१—भारत के राजवंशों की सूची

माण्डलिक स्वतन्त्र राज्य—